Dr. Dharmendra Kumar
FE-4, Malviya Industrial Area
Jaipur - 302 017

आरोग्य-साधन

(स्वास्थ्यका अनूठा ग्रन्थ)

प्राकृत भारती
क्रमांक 19984
जयपुर

लेखक—

महात्मा गांधी

साहित्य
हिं० पु०
काशी, (बनार

प्रकाशक—
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
ज्ञानवापी, बनारस।

र] १६४८ [मूल्य ।।।-)

प्रकाशक—
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी,
ज्ञानवापी, बनारस।

शाखाएँ—
२०१, हरिसनरोड, कलकत्ता।
दरीबा कलाँ, दिल्ली।
बांकीपुर, पटना।

मुद्रक—
कृष्णगोपाल केडिया
वणिक प्रेस
साक्षीविनायक, बनारस

लेखककी प्रस्तावना

मुझे आरोग्यपर बीस वर्षोंसे विचार करना पड़ रहा है। विलायतमें एक विशेष नियमके अधीन रहनेके कारण मुझे अपने खानपानका प्रबन्ध आपही करना पड़ता था। इसलिये मेरा प्राप्त अनुभव ठीक ही समझा जाना चाहिये। मैंने उसके आधारपर कुछ विचार स्थिर किये हैं। उनसे इण्डियन ओपीनियनके पाठकोंके लाभकी सम्भावना समझकर ये प्रकरण लिख रहा हूँ।

अंगरेजीमें एक कहावत है कि रोग दूर करनेसे रोग न होने देना कहीं अच्छा है। पानीके पहले पाल बाँधनेवाली कहावतका भी यही मतलब है। अंगरेजीमें रोगसे बचे रहनेके उपायको "हाइजिन" कहते हैं। हम अपनी भाषामें इसे 'आरोग्य संरक्षण शास्त्र, कह सकते हैं। यह वैद्यकशास्त्रसे भिन्न माना जाता है। कुछ लोग तो इसे वैद्यकका ही एक अङ्ग मानते हैं। मेरे इस भेद-वर्णका कारण केवल इतना ही है कि इन प्रकरणोंमें मुख्यरूपसे आरोग्य-रक्षाके उपाय ही बतलाये जायंगे। जैसे खोया हुआ रत्न मुश्किलसे मिलता है और पहले उसकी रक्षामें हमें जितना परिश्रम होता है, पीछे उसकी तलाशमें उससे कहीं अधिक परेशानी उठानी पड़ती है, वैसे ही आरोग्यरूपी रत्नके अपने हाथसे निकल जानेके बाद उसकी पुनः प्राप्तिमें बड़ा कष्ट और समय नष्ट होता है। अतएव बुद्धिमानोंको आरोग्य-संरक्षणपर ज्यादा जोर देना चाहिये। इन प्रकरणोंमें इस बातका भी विचार किया जायगा कि संयोगवश रोगी हो जानेपर हम फिर कैसे निरोग हो सकते हैं।

अङ्गरेज कवि मिल्टनका कथन है कि मनुष्यका मन ही उसके लिये स्वर्ग या नर्क है; स्वर्ग कहीं बादलोंमें और नर्क कहीं पृथ्वीके

अन्दर नहीं। मन ही बन्धन (नर्क) और मोक्ष (स्वर्ग) का कारण है। इसके अनुसार कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने रोगी या नीरोगी रहनेका आपही कारण है। हम जैसे अपने कार्योंसे रोगी होते है वैसे ही विचारोंसे भी रोगी हो जाते हैं। इसके बहुत उदाहरण हैं। जैसे बेटेको हैजा हुआ देख बापको भी हो गया। एक प्रसिद्ध वैद्यका कथन है कि महामारी, जा, प्लेग आदि बीमारियोंसे जितने रोगी नहीं मरते उससे ज्यादा उन बीमारियोंके भयसे मरते हैं। 'कायर बिना मौत मरता है, यह कहावत झूठी नहीं।'

अज्ञान भी आरोग्यनाशका एक बड़ा कारण है। किसी आकस्मिक विपत्तिके आ पड़ने और उसके निराकरणका कोई उपाय न जाननेके कारण निरुपयाय हो हम पागलसे हो जाते हैं, और भला करने जाते-जाते बुरा कर बैठते हैं। शरीर-सम्बन्धी नियमोंकी अज्ञानताके कारण बहुत बार हम अकर्त्तव्य कार्य करते और धूत, अनाड़ी वैद्योंके हाथमें जा फँसते हैं। बात ताज्जुब की है, फिर भी है सच्ची कि हमें पास पड़ी चीज़का ज्ञान दूर पड़ी चीजके ज्ञानसे कम होता है। अपने महल्लेकी खबर नहीं रखते, लेकिन इङ्गलैण्डके गाँव और नदी आदिके नाम खटाखट सुन लीजिये। आकाशके तारोंके सम्बन्धमें बड़बड़ाते रहते हैं लेकिन अपने घरका पता नहीं। आकाशके तारे गिननेका इरादा रखेंगे लेकिन छानकी बल्लियोंसे अनजान। आँखोंके सामने होते हुए प्रकृतिका विचित्र नाटक देखनेकी इच्छा नहीं पर नकली नाट्यशालाके ढंग देखनेके लिये बेताव रहते है और ठीक वैसे ही अपने शरीरमें क्या हो रहा है, वह क्या है, काहेसे बना है, उसके अन्दरकी हड्डियाँ, माँस, खून वगैरह कैसे बनते हैं, उन सबका क्या मतलब है, शरीरमें बोलनेवाला कौन है हममें यह गति कहाँसे आती है, हममें कभी खराब कभी अच्छे विचार कहाँसे आते हैं, हमारी मरजी बिना यह मन कैसे करोड़ों मीलकी

दौड़ लगा आता है, शरीर चिउँटीकी चाल चलता और मन हवासे भी हजार गुना तेज दौड़ता है। इनके कारणोंका हमें कुछ पता नहीं। अब देख लीजिये, हमारा शरीर हमारे लिये निकटसे निकट है, पर उसके साथ हमारा क्या सम्बन्ध है इसका हमें कमसे कम ज्ञान है।

इस कठिनाईसे पार पाना प्रत्येकका कर्त्तव्य है। शरीर और मनका सम्बन्ध जानना तो बहुत मुश्किल काम है, लेकिन शरीर सम्बन्धी साधारण बातोंकी कुछ जानकारी प्रत्येक मनुष्यके लिये आवश्यक समझी जानी चाहिये। बालकोंकी पढ़ाईमें भी इस ज्ञानको शामिल करना चाहिये। उङ्गली कट गई, क्या करें पता नहीं, काँटा गड़ गया, निकाल नहीं सकते, साँपने काट खाया तो धीरज धरकर तत्काल क्या करना चाहिये इसकी खबर नहीं, अगर इन सबका विचार करने बैठे तो शर्मसे हमारा सिर नीचा हो जाना चाहिये। गर्वसे यह कह देना कि मामूली आदमी इन मामलोंको कुछ नहीं समझेंगे निरा मिथ्याभिमान है और सीधे सादे मनुष्योंको फँसानेका जाल है।

इण्डियन ओपीनियनके पाठकोंमेंसे ऐसी पराधीनता और अज्ञानके दलदलमें फँसे हुए लोगोंके कुछ उद्धारकी इच्छासे ये लेख लिखे गये हैं।

यह बात नहीं कि ऐसे लेख पहले लिखे न गये हों, पर लोगोंको कुछ खास पत्र, पुस्तकें पढ़नेकी आदत पड़ जाती है। इण्डियन ओपीनियनके पाठकोंको अन्य पत्रोंके साथ-साथ इसे पढ़नेकी आदत पड़ गयी है और उनमेंसे कितने ही स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें नहीं पढ़ते। उन्हें इन प्रकरणोंसे लाभ होना सम्भव है। दूसरे, मैं समझता हूँ कि अनेक भिन्न-भिन्न पुस्तकोंका सार इन प्रकरणोंमें होगा। कितने ही ग्रन्थोंको पढ़ उनके विरोधी मतोंकी छानबीन और अनुभव कर मैंने अनेक विचार स्थिर किये हैं अर्थात् इन प्रकरणोंमें अनेक पुस्तकोंका सारांश होगा। इतना

ही नहीं, इनके पाठसे इस विषयमें नये प्रवेशकका विरोधी मतकी पुस्तकें पढ़कर गोलमालमें पड़नेसे बचना भी सम्भव है। एक पुस्तक कहती है अमुक दशामें गरम पानीका इस्तेमाल करना चाहिये। दूसरी उसी दशाके लिये ठण्ढे पानीकी व्यवस्था करती है। नये पढ़नेवालोंके लिये यह बड़ी आफत होती है। इन प्रकरणोंमें ऐसे विरोधी प्रयोगोंका यथामति विचार किया गया है, और जिन्हें मूल पुस्तकें पढ़नी हों, वे उन्हें पढ़कर इसमें बतलाये परिणामोंमें फेरफार कर सकते हैं। अतएव यह माननेमें कोई बाधा नहीं जान पड़ती कि इण्डियन ओपीनियनके अधिकांश पाठकोंको ये प्रकरण थोड़े बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे।

हमलोगोंको जरासे रोगोंमें भी तुरन्त डाक्टर, वैद्य या हकीम के यहाँ दौड़नेकी आदत पड़ गयी है। और न सही तो नाऊ (हजाम या पड़ोसीकी सलाहसे ही दवा ले लेते हैं। हम माने बैठे हैं कि दवा बिना रोग नहीं जाता। यह भारी भ्रम है। इसकी बदौलत जितनी तकलीफ उठायी और उठा रहे हैं उतनी अन्य कारणोंसे न भोगी है न भोगेंगे। दर्दके माने दुःख है। रोगका भी यही अर्थ है। बीमारीका इलाज वाजबी है, लेकिन उसके दूर करनेको दवा लेना व्यर्थ है, यही नहीं बहुत बार उससे नुकसान होता है। घरमें पड़े कूड़ेको ढाँप देनेका और दवाका एकसा असर होता है। ढाँप देनेसे कूड़ा सड़कर हमें हानि पहुंचाता है। ढक्कन सड़ जानेपर वह कूड़ेके ढेरको और बढ़ाता है, तब हमें सब निकालना पड़ता है। यही दशा दवा लेनेवालोंकी होती है और जो हम इस कूड़ेको निकाल दें तो घर जैसा-का-तैसा साफ हो जाय। रोग-दुःख देकर प्रकृति हमें सूचित करती है कि शरीरमें कूड़ा इकट्ठा हो गया है। प्रकृतिने शरीर हीमें कूड़ा निकालनेके रास्ते बना रखे हैं और जब-जब रोग हों तब तब हमें समझना चाहिये कि प्रकृतिने अब हमारे शरीरसे कूड़ा निकालना शुरू किया है। हमारे घरका कूड़ा साफ करने आनेवालेका हम उप-

कार मानते हैं। अगर उसके कूड़ा साफ करते समय जरा दिक्कत भी होती है तो हम उसे बरदाश्त कर लेते हैं। वैसे ही प्रकृतिके हमारे शरीररूपी घरमेंसे कूड़ा साफ करते समय यदि हम शान्त रहे तो हमारा शरीर साफ हो जाय और हम नीरोग हो जायँ। मान लीजिये हमें सर्दी हुई, अब हमें तुरन्त किसी दवाके लिये—अदरक खानेके लिये दौड़-धूप करनेकी जरूरत नहीं। क्योंकि हम जानते हैं कि हमारे शरीरके अमुक भागमें कूड़ा था, उसे प्रकृति निकाल रही है। हमें उसे मार्ग देना चाहिये, इससे सफाई हो जायगी। प्रकृतिकी प्रतिकूलता करनेपर इसका एक काम और बढ़ जायगा, कूड़ा साफ करना और हमसे लड़ना। हम चाहें तो प्रकृतिकी सहायता कर सकते हैं। कूड़ा इकट्ठा होनेके कारणको दूर करें जिसमें वह बढ़े नहीं, अर्थात् उस बीचमें खुली हवामें उचित व्यायाम करें जिससे चमड़ेके पसीने द्वारा शरीरका कूड़ा बाहर निकल जायगा। शरीरकी नीरोगिताके लिये यह सर्वोत्तम नियम है, इसे हर आदमी आजमाकर देख सकता है। हमें केवल मनको वशमें रखना चाहिये। जिन मनुष्योंमें सच्ची ईश्वरभक्ति है उनका आचरण तो ऐसा होना ही चाहिये। मनको स्थिर रखनेमें निम्नलिखित विचार सहायक होंगे—वैद्यकी दवासे हम आराम हो ही जायँगे इसका कोई ठेका नहीं ले सकता। वैद्योंके हाथमें पड़े हुए बहुतेरे आदमी बीमार ही रहते हैं। ऐसा होता तो हमे ये प्रकरण ही न लिखने पड़ते और आपका जीवन बड़े सुखमें बीतता होता।

अनुभवसे तो यह मालूम होता है कि जिस घरमें एक बार दवा देवीका प्रवेश हो जाता है वहाँसे फिर वह निकलनेका नाम ही नहीं लेती। अनगिनित आदमी जन्मभर किसी-न-किसी रोगमें फँसे रहते हैं, दवा-पर-दवा लेते रहते हैं। आज इस वैद्यके पास कल उस डाक्टर के। रोग दूर करनेवाले वैद्यकी तलाशमें हमेशा भटकते रहते हैं और अन्तमें स्वयं हैरान हो और दूसरोंको हैरान

करनेके बाद तड़प-तड़पकर परलोक सिधार जाते हैं। प्रसिद्ध जज परलोकवासी स्टीवन साहबने, जो हिन्दुस्तानमें भी रह गये हैं—एक बार कहा था कि जिन वनस्पतियोंके सम्बन्धमे वैद्य लोग बहुत कम जानते हैं, उन्हे उन शरीरोंमें जिनके विषयमें वे वनस्पतियोंकी अपेक्षा भी कम जानते हैं; पहुँचाते हैं। पूर्ण अनुभव प्राप्त होनेके बाद वैद्य स्वयं भी यही विचार प्रकट करने लगते हैं। वैद्यके सम्बन्धमें दुनियाके कुछ प्रसिद्ध डाक्टरोंके मत सुनिये—

डाक्टर मेजेन्दी—वैद्यक महा पाखण्ड है। सर एस्टली कपूर (प्रसिद्ध डाक्टर) "वैद्यक शास्त्र अटकलके सहारे रचा गया है।" सर जान फारब्ज—वैद्योंका रसायनपन मौजूद रहते भी बहुतेरे मनुष्योंका रोग प्रकृतिने ही दूर किया है। डाक्टर वेकर—ज्वरसे जितने बीमार मरते हैं उससे कहीं अधिक उस रोगकी दवासे मरते हैं। डाक्टर फ्राथ—डाक्टरीसे ज्यादा झूठा रोजगार दुनियामें शायद ही हो। डाक्टर टामस वाटसन—हमलोगोंका व्यवसाय बहुत प्रश्नोंके सम्बन्धमें शक और शुबहोंसे भरा हुआ है। डाक्टर फाजवेल-वैद्यक दुनियासे उठ जाय तो मनुष्य ज़ातिका अकथनीय लाभ हो। डाक्टर फ्रेक—हजारों आदमी दवाइयोंसे मारे जाते हैं। डाक्टर मैंसन गुड—लड़ाई, महामारी और अकाल जितने आदमियोंको खाते हैं, उससे कहीं ज्यादा आदमी दवाइयोंकी भेंट चढ़ते हैं।

हम हर जगह देखते है कि जहाँ वैद्य बढ़े हैं वहीं रोग भी बढ़े हैं। जिन पत्रोंमें अन्य विज्ञापन नहीं आते उनमें भी दवाइयोंके बड़े-बड़े विज्ञापन तो आ ही जायँगे। इण्डियन ओपीनियनमें जब उसके कार्यकर्त्ता विज्ञापन संग्रहके लिये जाते थे उस समय दवा बेचनेवाले अपने विज्ञापन छापनेपर बड़ा जोर देते और अच्छे दाम देनेका लोभ दिखाते। एक पैसेकी दवाके लिये हम एक रुपया देते हैं। प्रायः दवावाले यह नहीं प्रकट करते कि

उनकी दवा किन चीजोंके मेलसे बनी है। 'गुप्त दवाइयाँ' इस नामसे एक किताब किसी दवा बेचनेवालेने ही हालमें प्रकाशित की है। उसका उद्देश्य है कि लोगोंको भटकना न पड़े। उसमें उसने बतलाया है कि सार्सापरिला, फ्रूटसाल्ट, सीरप वगैरह नामी-नामी (पेटेण्ट) दवाइयोंके लिये हम २। से ५, तक कीमत देते हैं। असलमें वह एक पैसेसे एक आनेतककी होती है। इस हिसाबमें कम-से-कम छत्तीस गुनी और अधिकसे अधिक तीन सौ छत्तीस गुनी कीमत अर्थात् साढ़े तीन हजारसे पैंतीस हजार तकका नफा दवाइयोंपर देते हैं।

हमारे पाठकोंको इतना समझ लेना चाहिये कि बीमारोंको डाक्टरोंके चक्करमें पड़नेकी जरूरत नहीं है। यकायक दवा लेनेकी आवश्यकता भी नहीं। लेकिन अधिकांश मनुष्योंको इतना सब्र नहीं होता। साधारण मनुष्योंके मनमें यह बात नहीं जमती कि सभी डाक्टर अविश्वासी हैं और दवा हमेशा बुरा असर करती है। इन लोगोंको निम्न बातोंका ख्याल रखना चाहिये :—"जहाँ-तक सम्भव हो सब्र करो, डाक्टरोंको न सताओ और बुलाना ही हो तो किसी भलेमानसके पास जाओ, उसकी सलाहपर चलो, दूसरेको जब वह कहे तभी बुलाओ। तुम्हारा रोग तुम्हारे डाक्टरके हाथमें नहीं है। तुम्हारी आयु होगी तो जरूर आराम हो जाओगे और तदबीर करनेपर भी तुम न बचो या तुम्हारे आत्मीय न बचें तो समझना चाहिये कि यह भी जीवनका एक परिवर्त्तन ही है।" इन्हीं विचारोंके अनुसार चलनेकी इच्छासे ये प्रकरण लिखे गये हैं। इनमें शरीर रचना, हवा, पानी, खुराक, कसरत, कपड़ा, पानी और मिट्टीके इलाज, आकस्मिक घटनाएँ, शिशुपालन, गर्भ समयमें स्त्री-पुरुषका कर्त्तव्य, साधारण न देख पड़नेवाले रोग इन विषयोंके सम्बन्धमें मैं पाठकोंके साथ विचार करना चाहता हूँ।

फिनिक्स-नेटाल } —मोहनदास करमचन्द गांधी

विषय सूची

पहला भाग

विषय	पृष्ठ
आरोग्य	१
हमारा शरीर	३
हवा	६
पानी	१५
खुराक	१९
कितना और कितनी बार खाना चाहिये ?	४३
कसरत	४७
पोशाक	५२
गुह्य प्रकरण	५६

दूसरा भाग (कुछ उपचार)

विषय	पृष्ठ
हवा	६६
जल-चिकित्सा	६८
मिट्टीका उपचार	७६
बुखार और उसके इलाज	७९
कब्ज, संग्रहणी, पेचिश बवासीर	८२
छूतके रोग, शीतला, चेचक	८४
छूतके और और रोग	९२
सौरी	९७
शिशुपालन	१००
आकस्मिक घटनाएँ —	
,, ,, डूबना	१०५
,, ,, जलना	१०८
,, सर्प डसना	११०
,, बिच्छूका डङ्क	११६
पूर्णाहुति	११७

प्रकाशकका निवेदन

आरोग्य साधन जगत्प्रसिद्ध साधुचरित्र, वीर सत्याग्रही महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधीकी गुजराती पुस्तकका अनुवाद है। आरोग्यका सच्चा अर्थ बतलानेवाली ऐसी दूसरी पुस्तक शायद ही मिले। इसमें अटकलपच्चू बातें नहीं हैं। बल्कि महात्माजीके बीसों वर्षके अनुभव सञ्चित हैं। इसके अनुसार चलनेसे जीवन सुख और शान्तिमय हो सकता है। आशा है, इन विचारोंका घर-घर प्रचार होगा।

आरोग्य साधन

महात्मा गाँधी

आरोग्य-साधन

—:❀:—

पहला भाग

—:०:—

१—आरोग्य

साधारणतः लोग उस मनुष्यको नीरोग समझते हैं जो मजेमें खाता-पीता है, चलता-फिरता है और वैद्यको नहीं बुलाता। पर सोचनेसे मालूम होगा कि लोग इसमें भूलते हैं। ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं है कि खाते-पीते और चलते फिरते मनुष्य भी रोगी हैं लेकिन बीमारीकी परवाह न करनेके कारण अपनेको नीरोग मान बैठे हैं। बिलकुल नीरोग मनुष्य दुनियामें बहुत ही थोड़े मिलेंगे।

एक अंगरेज लेखकका कथन है, कि नीरोग उन्हीं मनुष्योंको कहना चाहिये जिनके शुद्ध शरीरमें शुद्ध मनका वास हो। मनुष्य केवल शरीर ही तो नहीं है। शरीर तो उसके रहनेकी जगह है। शरीर, मन और इन्द्रियोंका ऐसा घना सम्बन्ध है कि इनमें किसी एकके बिगड़नेपर बाकीके बिगड़नेमें जरा भी देर नहीं लगता। शरीरकी उपमा गुलाबके फूलके साथ दी गई है। गुलाबके फूलका ऊपरी भाग तो उसका शरीर है और सुगन्धि उसकी आत्मा। कागजके गुलाबको कोई पसन्द नहीं करता। सूंघनेसे उसमें गुलाबकी सुगन्धि नहीं आवेगी; असली गुलाबकी परख वास ही है। जैसे गुलाबके समान दिखाई पड़नेवाले, गन्धहीन फूलको लोग फेंक देते हैं वैसे ही ऐसे शरीरपर किसी का प्रेम नहीं

हो सकता जो ऊपरसे देखनेमें तो अच्छा लगता है पर उसके अन्दर रहनेवाली आत्माके व्यवहार ठीक नहीं होते। बुरे चरित्रके लोग नीरोग नहीं गिने जाते। शरीर और आत्माका ऐसा गहरा सम्बन्ध है कि जिसका शरीर नीरोग होगा उसका मन अवश्य ही शुद्ध होगा। पाश्चात्य देशोंमें इस मतका एक पंथ ही है कि जिसका मन शुद्ध होता है उसके शरीरमे रोग होते ही नहीं, और हुए भी तो वह शुद्ध मनके जोरसे अपना शरीर नीरोग कर सकता है। सार यह है कि आरोग्यका दृढ़ साधन हमारा मन ही है, मनकी शुद्धिसे ही आरोग्य प्राप्त होता है।

तामसिकता, आलस्य, बहरापन ये सारे बीमारीके चिह्न हैं। कितने डाक्टर तो चोरी आदि दुर्गुणोंको भी बीमारी ही मानते हैं। विलायतमें कितनी ही धनी स्त्रियाँ दूकानोंसे बहुत मामूली-मामूली चीजें चुराती देखी गयी हैं। वहाँ डाक्टर इसे 'क्लेप्टेमेनिया' की बीमारी कहते हैं। कुछ मनुष्योंको खूनखराबी किये बिना कल नहीं पड़ती। यह भी एक तरहका रोग है।

अब हम कह सकते है कि जिनका शरीर अखण्ड है, शरीरमें किसी तरहकी कमी नहीं, दाँत ठीक हैं, कान, आँख इत्यादि मौजूद हैं, नाक नहीं बहती, चमड़ेसे पसीना बहता है और बसाता नहीं, पैर नहीं बसाते, मुँहसे बू नहीं निकलती, हाथ-पैर साधारण काम कर सकते है, जो विषयोंमे नहीं फँसे रहते, न बहुत मोटे है न पतले; जिनकी इन्द्रियाँ, मन सदा वशमें रहता है वे ही नीराग हैं। आरोग्य प्राप्तकर उस भोगना आसान काम नहीं है। हमें ऐसा आरोग्य न मिलनेका कारण यह है कि हमारे माता पिताको ऐसा आरोग्य प्राप्त नहीं। एक बहुत बड़े लेखकने लिखा है कि माता-पिता हर तरहसे योग्य हों तो उनकी सन्तति उनसे बढ़ी-चढ़ी होनी चाहिये। विकाशवादी भी इसे मानते हैं। बिलकुल नीरोग मनुष्यको मौतका डर नहीं रहता। हमारा मौतसे बहुत डरना साबित करता है कि हम नीरोग नहीं

२—हमारा शरीर

क्षिति, जल पावक, पवन पुनि पंचम गगन विचार।
पंच तत्वके पिण्डको नाम भयो संसार॥

ऊपरके दोहेमें शरीरका वर्णन अच्छी तरह आ जाता है। इसमें कही हुई पृथ्वी अर्थात् मिट्टी, जल, आग, आकाश और वायुके मेलसे प्रकृति और उसके भी बनानेवाले पुरुषने जो खेल रचा उसीको हम संसार कहते हैं। संसार जिन चीजोंसे बना है उन्हींसे यह मिट्टीका पुतला—जिसे हम अपना शरीर कहते हैं—बना है। कहावत है कि 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' जैसा देहमें वैसा देशमें। इससे पता लगेगा कि शरीर निर्वाहके लिये साफ मिट्टी, साफ पानी, धूप, सूर्य, साफ और खुला मैदान (आकाश) तथा साफ हवा बहुत जरूरी है। इनमेंसे किसी भी तत्वसे डरनेकी जरूरत नहीं। इनमेंसे शरीरके प्रमाणके अनुसार किसी भी तत्वकी कमी हो जाते ही शरीरमें बीमारी पैदा होती है।

चाम, हड्डी, मॉस और खूनसे शरीर बना है। इसमें मुख्य आधार हड्डियाँ हैं, इन्हींके बल हम सीधे खड़ा हो सकते तथा चलते-फिरते हैं। हड्डियाँ शरीरके कोमल भागोंकी रक्षा करती हैं। खोपड़ीसे दिमाग और पसलियोंसे हृदय तथा फेफड़ोंकी रक्षा होती है। डाक्टरोंकी गिनतीसे सारे शरीरमें १३८ हड्डियाँ हैं। हड्डियोंका उपरी भाग सख्त किन्तु भीतरी भाग पोला और नरम होता है। हड्डियाँ जहाँ एक दूसरेसे जुड़ती है वहाँ मज्जाका परदा होता है। यह मज्जा भी नरम हड्डियोंमें ही गिनी जाती है।

हमारे दाँत भी हड्डी ही हैं। पहले बचपनमें दूधिया दांत

निकलते हैं। उन सबके गिरनेपर अन्नके दाँत निकलते हैं। इनके गिर जानेपर फिर नहीं निकलते। दूधके दाँत ६ से ८ महीनेके बाद निकलने लगते हैं और दो ढाई बरसकी उम्रतक अधिकतर निकल आते हैं। अन्नके दाँत पाँच बरसके बाद निकलने लगते हैं और १७ से २५ बरसकी उमरतकमें सब निकल चुकते हैं। डाढ़े (चौभर सबसे पीछे निकलती हैं।

चमड़ेको छूनेसे बहुत जगह हमको माँसका लचलचापन मालूम होगा। माँसके इस भागका नाम स्नायु है। हमारे ज्ञान-तन्तु इन्हींके द्वारा अपना काम करते हैं। स्नायुओं (पुट्ठों) द्वारा ही हम अपने हाथ सिकोड़ सकते हैं, फैला सकते हैं, जबड़े हिला सकते हैं, आँखे बन्द कर सकते हैं।

हम इस पुस्तकमें शरीर सम्बन्धी विशेष ज्ञानका वर्णन नहीं करना चाहते। न मुझे स्वयं उतना ज्ञान ही है, बात भलीभांति समझमें आ जाने योग्य वर्णन किया जायगा। अब शरीरके मुख्य भागोंका विचार करना चाहिये। सबसे मुख्य भाग पाकाशय अथवा मेदा (कोठा है। इसके क्षणभर भी आलस्य करनेसे हमारा सारा शरीर ढीला और शिथिल हो जाता है। मेदेपर हम जितना भार डालते हैं उतना सहनेकी ताकत बड़े-बड़े विकराल जन्तुओंमें भी नहीं होती। मेदा भोजनको पचाकर उसके द्वारा शरीरका पोषण करता है। इस भागसे शरीरको वही सहायता मिलती है जो रेलगाड़ीको एञ्जिनसे। मेदा पसलियोंके अन्दर बायीं ओर होता है। इसमें अनेक क्रियाएँ होकर भिन्न भिन्न प्रकारके रस तैयार होते हैं और भोजनका तत्व खींचता है। बचा हुआ निकम्मा पदार्थ मलमूत्र बनकर आँतोंके रास्ते बाहर निकल जाता है। इसके ऊपरी हिस्सेमें कलेजेका बाँया भाग है। मेदेकी बायीं ओर तिल्ली है। कलेजा पसलियोंके अन्दर दाहिनी ओर है। इसका काम खून साफ करना और पित्त पैदा करना है। यह पित्त पाचन क्रियाके लिये बहुत ही उपयोगी होता है।

पसलियोंके नीचे खाली जगहमें अन्तःकरण अथवा रक्ताशय और फेफड़े हैं। अन्तःकरणकी थैली दोनों फेफड़ोंके बीच बायीं ओर रहती है। छातीमें दाहिनी और बायीं ओरकी मिलकर कुल २४ हड्डियाँ हैं। पाँचवीं और छठीं पसलियोंके बीचमें कलेजेकी धुकधुकाहट होती है। हमारी दाहिनी और बायीं ओर दो फेफड़े हैं। ये श्वासनलीके बने हुए हैं। इनमें हवा भरी रहती है, और उनसे खून साफ होता है। श्वासनली द्वारा ही फेफड़ोंमें हवा पहुँचती है। हवा नथनोंसे जानी चाहिये। नाकसे गई हुई हवा गर्म होकर फेफड़ोंमें पहुँचती है। बहुतेरे मनुष्य अज्ञानवश मुँहसे साँस लेते और हानि उठाते हैं। मुँह खाने इत्यादिके लिये है। साँस हमेशा नाकसे ही लेनी चाहिये।

अब देहके आधाररूप, बहनेवाले खूनपर विचार करना चाहिये। खूनसे हमारा पोषण होता है। वह भोजनमेंसे पोषक भागको खींचकर निरुपयोगी भागको मलमूत्रके रूपमें बाहर निकाल देता और सारे शरीरको गरम रखता है। खून शरीरके अन्दरकी नलियों, नसों द्वारा सदा फिरा करता है। खूनकी गतिके कारण ही हमारी नाड़ी एक मिनटमें लगभग ७२ बार चलती उछलती है। बच्चोंकी नाड़ी तेज चलती है। बूढ़ोंकी सुस्त।

खूनकी सफाईका सबसे बड़ा साधन हवा है। शरीरमें चक्कर लगाकर जो खून फेफड़ोंमें जाता है वह निकम्मा हो जाता है। उसमें जहरीले पदार्थ पैदा हो जाते हैं। जो हवा भीतर जाती है वह इन जहरीले पदार्थोंको खींच लेती है और अपनेमें मिली हुई प्राणवायु खूनको दे देती है। यह क्रिया सदा होती रहती है। भीतर गई हुई हवा खूनके जहरीले पदार्थको लेकर बाहर निकल आती है और प्राणवायु खूनमें मिलकर नसोंके द्वारा सारे शरीरमें चक्कर लगाया करता है। इससे समझा जा सकता है कि बाहर निकली हुई साँस कितनी जहरीली होती है। हवाका प्रभाव हमारे शरीरपर बहुत अधिक रहता है इसलिये अब उसका विचार करना चाहिये।

३—हवा

शरीरको तीन प्रकारकी खुराक आवश्यक है; हवा, पानी और अन्न। इनमें हवा सबसे जरूरी चीज है। यही कारण है कि प्रकृतिने उसे इतनी अधिकतासे उत्पन्न किया है कि वह हमें बिना मोल मिला करती है। लेकिन आजकलके सुधारोंने हवाके भी दाम कर दिये हैं। इन जमानेमें हवा खानेके लिये बाहर जानेकी जरूरत होती है और उसमें पूरे दाम लगते हैं। बम्बई-वालोंकी तन्दुरुस्ती माथेरनकी हवासे सुधरती है। मलावारकी पहाड़ीपर उन्हें और भी अच्छी हवा मिलती है; परन्तु दाम चाहिये; डरबनके रहनेवालोंको अच्छी हवा लेनी हो तो बेरिया जाकर रहना चाहिये; इसमें भी दामका काम है। इसलिये इस जमानेमें यह कहना कि 'हवा मुफ्त मिलती है' असङ्गत जान पड़ता है।

पर हवा मुफ्त मिले या दामोंसे, इसके बिना काम घड़ीभर भी चलना कठिन है। पहले आप पढ़ चुके हैं कि खून सारे शरीरमें फिरकर फेफड़ोंमें आकर साफ होता और फिर लौट जाता है; दिन-रात यही क्रिया हुआ करती है। हर साँससे जो हमारे शरीरसे बाहर निकलती है जहरीली हवा बाहर निकला करती और बाहरकी हवासे प्राणवायु श्वासके द्वारा अन्दर जाकर खूनको साफ करता रहता है। यह श्वास निकालने और लेनेका काम हरदम हुआ करता है और इसीपर मनुष्य का जीवन निर्भर है। पानीमें डूबकर मरना क्या है? यही कि हम शरीरके अन्दरके वायुको बाहर नहीं निकाल सकते और न अपने शरीरमें प्राणवायु दाखिल कर सकते हैं। पनडुब्बे बखतर पहिन-कर पानीमें उतरते हैं और पानीके ऊपर रहनेवाली नदीके द्वारा बाहरकी हवा लेते हैं; इसीसे वे लोग बहुत देरतक पानीके अन्दर रह सकते हैं।

डाक्टरोंने प्रयोगसे सिद्ध किया है कि यदि मनुष्यको पाँच

मिनट भी हवाके बिना रखा जाय तो वह मर जायगा। कभी-कभी माँकी बगलमें दबे हुए बालक दम घुटकर मर जाते हैं। भूलसे बच्चेका मुँह और नाक दब जानेसे बाहरकी हवा उसे नहीं मिल पाती।

इससे यह समझमें आ जायगा कि हवा हमारी सबसे आवश्यक खुराक है और वह हमें बिना मांगे मिला करती है। पानी और अनाज तो हमें पता लगाने और माँगनेपर ही मिलेंगे, परन्तु हवा हम बिना अपनी इच्छाके ही पाते रहते हैं।

हम जैसे गन्दा पानी पीते और बुरा भोजन करते हिचकते हैं वैसे ही गन्दी हवामें साँस लेनेसे भी हमें हिचकना चाहिये; परन्तु हम गन्दी हवाका जितना इस्तेमाल करते हैं उतना खराब अन्न और पानीका नहीं करते। कारण, हमलोग मूर्तिपूजक हैं; मूर्तिमान-प्रत्यक्ष बातोंकी ओर ही हमारा विशेष ध्यान रहता है। हवाको हम आँखोंसे नहीं देख सकते; इससे इस बातका ख्याल नहीं होता कि हम साँससे कितनी खराब हवा भीतर ले जाया करते हैं। हम दूसरेका जूठा भोजन करते हिचकते हैं, जूठा पानी पीते विचार करते हैं, और इसमें घृणा न हो, तो भी इसमें तो सन्देह नहीं कि दूसरेका कै किया हुआ अन्न और पानी तो हम कभी ग्रहण न करेंगे। अकालपीड़ित भूखा मनुष्य भी मरना कबूल करेगा परन्तु उसे नहीं खायगा। परन्तु हम लोग मनुष्योंके द्वारा कै की हुई—साँससे बाहर निकाली हुई—हवा बिना किसी प्रकारकी घृणा और संकोचके अपने नाकसे मुँहके अन्दर खींचते रहते हैं। आरोग्यशास्त्रके नियमानुसार कै की हुई हवा उतनी ही खराब है जितना कि कै किया हुआ अन्न। यह साबित हो चुका है कि एक मनुष्यके साँससे बाहर निकली हुई हवा किसी दूसरे मनुष्यके फेफड़ोंमें दाखिल कर दी जाय तो तुरन्त ही उसकी मृत्यु हो जायगी। आश्चर्य है कि बहुतेरे मनुष्य एक ही कोठरीमें सटकर बैठते, सोते तथा सड़ी हवामें हरदम साँस लेते रहते हैं।

सौभाग्यवश हवा ऐसी चञ्चल है कि हरदम उड़ती रहती है, तुरन्त फैल जाती है और बारीक छेदोंमें भी घुस सकती है। तङ्ग कोठरीमें भी दरवाजेकी दराज़ों तथा ऊपरी रास्तोंसे बाहरी हवा थोड़ी बहुत आती रहती है, इसलिये हमलोग बिलकुल ही कैद की हुई हवा साँससे फिर अन्दर नहीं ले जाते; उसमें कुछ-न-कुछ ताजी हवा मिल जाती है। हम जब हवा बाहर निकालते हैं वह निरन्तर साफ हुआ करती है। खुली हवामें साँस लेनेपर अन्दरसे निकली हवा उसमें मिलकर तुरन्त फैल जाती है। प्रकृतिके नियमानुसार वह भी साफ हो जाती है। प्रकृति साफ हवाके परिणामको सदा स्थिर रखती है। इस छोटी-सी पृथ्वीके चारों ओर हवा बहुत बड़े परिणाममें फैली हुई है।

अब हम सहजमें समझ सकते हैं कि ज्यादा आदमी क्यों बीमार और कमजोर रहा करते हैं? बेखटके कहा जा सकता है कि सौमें निन्नानबे मनुष्योंकी बीमारीका कारण खराब हवा ही है। क्षयी, बुखार और अन्य अनेक छूतवाले रोगोंका कारण हमारी साँससे ली हुई खराब हवा ही है। इसलिये इनके दूर करनेका पहला; सबसे सहज और अन्तिम उपाय यह है कि हमलोग साफ हवामें साँस लें। इसकी बराबरी वैद्य, डाक्टर, हकीम कोई भी नहीं कर सकता। क्षयरोग, फेफड़े सड़ जानेकी निशानी है। फेफड़े जहरीली हवासे ही सड़ते हैं। जैसे बुरा कोयला भरनेसे एञ्जिन खराब हो जाता है वैसे ही खराब हवासे फेफड़े बिगड़ जाते हैं। आजकलके डाक्टरोंकी राय है कि क्षयरोगीके लिये सबसे अच्छा और पहला उपाय उसे चौबीसों घण्टे खुली हवामें रखना है। इसके बिना और कोई उपाय काम नहीं करता।

हम केवल फेफड़ोंसे ही हवा नहीं लेते हैं, चमड़े द्वारा भी उसका कुछ भाग हमारे अन्दर जाया करता है। चमड़ेमें जो अनेक बारीक छेद हैं उनसे भी हवा लिया करते हैं।

हम सबको जानना चाहिये कि ऐसी जरूरी हवाको कैसे साफ रखा जा सकता है। जरा समझदार होते ही बच्चेको हवाकी उपयोगिताका ज्ञान करा देना बहुत जरूरी है। यदि यह बयान पढ़नेवाले इस अति सहज किन्तु परमावश्यक कार्यको अर्थात् स्वयं हवाके बारेमें साधारण ज्ञान प्राप्त कर उसके अनुसार व्यवहार करेंगे और अपने लड़कोंको भी उसकी शिक्षा देंगे और उनसे भी उनके अनुसार व्यवहार करावेंगे तो मैं अपनेको कृतार्थ समझूँगा।

हमारे पाखाने, बाड़े और बेजगह पेशाब करनेके स्थान ही हवा बिगाड़नेके प्रधान साधन हैं। पाखानोंकी गन्दगीसे होनेवाली हानियोंका खयाल बहुत ही कम आदमियोंको होता है। बिल्ली, कुत्ते पाखाना फिरनेके पहले पञ्जोंसे एक गढ़ा-सा खोद लेते हैं और पाखाना फिरकर उसपर धूल डाल देते हैं। जहाँ नये ढङ्गके पानीके नलवाले पाखाने न हों वहाँ हमें भी ऐसा ही करना चाहिये। पाखानेको टीनके पीपे या मिट्टीके गमलेमें राख या सूखी मिट्टीसे पूरा ढक दे इससे बदबू नहीं फैलती और मैलेसे उड़कर शरीरपर बैठनेवाली मक्खी आदिसे भी बचाव रहता है। जिसकी सूँघनेकी शक्ति नष्ट नहीं हो गई वा मैलेकी बदबूकी आदत नहीं पड़ गई है वह समझ सकता है कि मैला खुला रहनेसे हवामें कितनी बदबू फैलती है। अगर हमारे भोजनमें कोई पाखाना मिलाकर आगे लाकर रखे तो देखते ही कै हो जायगी; परन्तु पाखानेकी बदबू मिली हवाको हम बेखटके निगल जाते हैं। वास्तवमें उसमें और पखाना मिले हुए भोजनमें तिलभर भी फरक नहीं। इतना भले ही समझ लीजिये कि पाखाना मिला हुआ भोजन तो हमें आँखोंसे देख पड़ता है और यह पाखानेकी बदबू मिली हुई हवा नहीं देख पड़ती।

पाखानेकी बैठक, संडास इत्यादि खूब साफ रखनी चाहिये।

हमलोग ऐसे कामोंसे शर्माते हैं, उनके करनेमें हमें घृणा होती है परन्तु असलमें तो हमें घृणा होनी चाहिये ऐसे पाखानोंको काम-में लानेमें, साफ करनेमें नहीं। जो मैला हमारे शरीरके अन्दरसे निकलता है और जिसे हम दूसरे मनुष्यसे उठवाते हैं, उसे स्वयं साफ करनेमें क्या हर्ज है ? इस काममें तनिक भी बुराई नहीं है। यह बात हमें स्वयं सीखकर अपने बच्चोंको भी सिखानी चाहिए। जब बाल्टी मैलेसे भर जाय तो उसे उठा ले जाकर मैला दो फीट गहरे गढ़ेमें डालकर उसपर मिट्टीकी खूब मोटी तह जमा दे। बाहर पाखाना जानेकी आदत हो तो घरसे खूब दूर जाना चाहिये। वहाँ बाहर पैर या हाथसे एक छोट-सा गढ़ा खोदकर अपना काम करे और खोदी हुई मिट्टी उसके ऊपर पाट दे।

हम मनमानी जगहोंमें पेशाब करके भी हवा गन्दी करते हैं। यह आदत बिलकुल छोड़ देनी चाहिये। जहाँ पेशाबका नियत स्थान न हो वहाँ घरसे दूर जाकर सूखी जमीनपर पेशाब करें और उसपर धूल डाल दें। मैला बहुत गहराईमें न गाड़ें। एक तो इस हालतमें उसपर सूर्यकी गर्मीका असर नहीं होता, दूसरे गड़े हुए मैलेसे आसपासके पानीके सोतोंके बिगड़ जानेका खटका रहता है।

हमलोग फ़र्शपर, बरामदेकी जमीनपर, आँगनमें, दीवारोंपर हर जगह बिना विचारे पिचपिच थूका करते हैं; यह बड़ी बुरी आदत है। थूक बहुधा जहरीला होता है। क्षयरोगीका थूक तो बहुत ही जहरीला समझा जाता है। उसके जन्तु उड़कर दूसरोंकी साँसमें मिल जानेसे बड़ा नुकसान पहुँचाते हैं। इसके सिवा थूकनेसे घर इत्यादि बहुत गन्दे हो जाते हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि घरमें जहाँ-तहाँ न थूककर थूकदानी रखें और रास्ता चलते थूकनेकी आवश्यकता मालूम हो तो जहाँ सूखी जमीनपर खूब धूल हो वहाँ थूकें। इससे थूक सूखकर मिट्टीमें मिल जायगा और

नुकसान कम पहुँचा सकेगा। अनेक डाक्टरोंकी राय है कि क्षय रोगीको तो केवल ऐसे बरतनमें ही थूकना चाहिये जिसमें जन्तु-नाशक दवा पड़ी हुई हो। क्षय रोगीके बहुत धूल पड़ी हुई जमीन-पर थूकनेसे भी थूकके जन्तुओंका नाश नहीं होता, यह धूल थूकमें आये हुए जन्तुओंको अपने साथ ले हवामें उड़कर लोगोंको नुकसान पहुँचाती है। चाहे यह राय सच हो या झूठ, किन्तु हम इससे इतना तो अवश्य समझते हैं कि जहाँ-तहाँ थूकनेकी आदत गन्दी और नुकसान पहुँचानेवाली है।

कुछ लोगोंमें शाक-भाजी इत्यादिके छिलके, पड़े-पड़े सड़ जानेवाले और रींधे हुए अन्नको जहाँ-तहाँ फेंक देनेकी आदत होती है। यदि ये चीजें थोड़ी गहराईमें गाड़ दी जायँ तो उससे हवा भी न बिगड़े और कुछ दिनोंमें उनकी उपयोगी खाद बन जाय। कोई भी सड़नेवाली चीज खुली न फेंकनी चाहिये।

इच्छा हो तो इन सूचनाओंके अनुसार बर्तना कुछ कठिन नहीं है।

हमारी बुरी आदतोंसे हवा कैसे बिगड़ती है और उसकी खराबी कैसे रोकी जा सकती है इसपर विचार करनेके बाद अब हमें इसपर विचार करना है कि हवा कैसे लेनी चाहिये।

पीछे कहा गया है साँस लेनेका मार्ग नाक है—मुँह नहीं, पर ठीक तरहसे साँस लेनेवाले मनुष्य बहुत कम मिलेंगे। बहुतेरे मनुष्य मुँहसे साँस लेते हैं। यह आदत हानिकारक है। मुँहसे ज्यादा ठण्ढी हवा लेनेसे सर्दी हो जाती है, गला बैठ जाता है। मुँहसे साँस लेनेवालोंके फेफड़ोंमें हवाके रजकण चले जाते हैं। और उनसे प्रायः फेफड़ोंको बहुत हानि पहुँचती है। विलायत जैसे शहरोंमें इसका प्रत्यक्ष अनुभव तुरन्त हो जाता है। वहाँ नवम्बर महीनेमें बहुत कुहरा पड़ता है। यह कारखानोंकी चिम-नियोंके धुएँसे मिलकर पीला हो जाता है। इसमें बारीक काले धूलके कण होते हैं। इनमें भरी हुई हवाको मुँहके रास्ते ग्रहण

करनेवाले थूकमें ये कण दिखाई पड़ते हैं। इससे बचनेके लिये कितनी ही स्त्रियां—जिन्हें नाकसे साँस लेनेकी आदत नहीं होती, मुँहपर खास तरहका जालीदार कपड़ा बाँधे रहती हैं। यह चलनीका काम देता है। इसमेंसे गई हुई हवा साफ होकर जाती है। खोलकर देखनेसे प्रायः इसमें धूलके कण दिखलाई पड़ते हैं। प्रकृतिने नाकके भीतर ऐसी ही चलनी बना रखी है। नाकसे ली हुई हवा साफ होनेके बाद ही फेफड़ोंमें जाती है, इतना ही नहीं, नाकसे ली हुई हवा गरम होकर अन्दर उतरती है। इसलिये आरोग्यके ध्यानसे हर मनुष्यको नाकसे ही साँस लेना सीखना चाहिये। यह कठिन नहीं है। बोलने आदिके काम न होनेपर मुँह बन्द रखना चाहिये। जिन्हें मुँह खुला रखनेकी आदत पड़ गई हो वे रातके समय मुँहपर पट्टी बाँधकर सोवें तो उन्हें विवश होकर नाकसे ही साँस लेनी पड़ेगी। साँझ सवेरे खुली हवामें खड़े होकर बीस दफे नाकसे लम्बी साँस लेनी चाहिये। नीरोग और नाकसे साँस लेनेवाला मनुष्य भी सदा साफ हवामें इस प्रकार साँस ले तो छाती मजबूत और चौड़ी हो जायगी। यह अभ्यास हर मनुष्यके करने लायक है। अभ्यासके शुरूमें छाती नाप लें और एक महीनेके बाद फिर नापें तो देखेंगे कि इतने ही दिनोंमें छाती चौड़ी हो गई है। सैंडो इत्यादि डम्बलकी कसरतोंका भी यही रहस्य है। झपाटेसे डम्बल घुमानेमें साँस लम्बी और जल्दी लेनी पड़ती है, इससे छाती चौड़ी और मजबूत होती है।

साँस लेनेकी विधि जान लेनेपर दिन-रात खुली हवा लेनेकी आदत डालनी चाहिये। हमलोगोंकी साधारण आदत है कि दिनभर तो घर या दूकानमें घुसे रहते हैं और रातको सन्दूक सरीखी कोठरीमें सोते हैं। एकाध खिड़की या दरवाजा रहा भी तो उसे बन्द कर लेते हैं। यह आदत बहुत ही बुरी है। यथा-सम्भव हरदम खुली हवामें साँस लें। कम-से-कम सोते समय तो

अवश्य ही ऐसी जगहके बरामदे या मैदानमें लेटें, जहाँ काफी खुली हवा मिले।

जिन्हें यह सुभीता न हो वे अपनी कोठरीकी खिड़कियाँ और दरवाजे जहाँतक हो सके खुले रखें। हवा हमारी चौबीसों घण्टेकी खुराक है, इसलिये किसी रूपमें उससे डरनेकी जरूरत नहीं। यह कोरा वहम है कि सवेरेकी ठण्ढी हवा या खुली हवामें साँस लेनेसे बीमारी हो जाती है। जिन्होंने बुरी आदतोंसे अपने फेफड़े बिगाड़ लिये हैं उन्हें यकायक खुली हवामें साँस लेनेसे सर्दी हो सकती है, परन्तु इन मनुष्योंको भी सर्दीसे डरना नहीं चाहिये। यह सर्दी बहुत जल्द मिट जाती है। आजकल यूरोपमें क्षयी रोगियोंके लिये ऐसे खुले मकान बनाये गये हैं जिनमें उन्हें खुली हवा मिल सके। हमारे देशमें महामारीका उपद्रव सदैव बना रहता है, इसका एकमात्र कारण हमलोगोंका हवा बिगाड़ना और बिगड़ी हुई हवामें साँस लेना है। याद रखना चाहिये कि कमजोर मनुष्य भी खुली हवामें साँस ले तो इससे उसे लाभ ही होगा। खुली हवामें साँस लेना और हवाको शुद्ध रखना सीख लेनेपर हम बहुतेरे रोगोंसे सहज ही बच जायँगे और हमपर जो गन्दा रहनेका दोषारोपण किया जाता है वह भी अधिकांशमें दूर हो जायगा।

जैसे खुली हवामें सोनेकी जरूरत है वैसे ही मुँह खुला रखकर कपड़ा न डालकर—सोना आवश्यक है। यहाँ बहुतेरे लोग मुँह ढककर सोते हैं। इससे हम बाहर निकली हुई जहरीली साँसको भीतर वापस लिया करते हैं। हवाकी यह विशेषता है कि जहाँ जरा रास्ता होता है वहीं घुस जाती है। कपड़ेको हम कितना ही लपेटकर क्यों न ओढ़ें, फिर भी थोड़ी बहुत बाहरी हवा उसमें घुस ही जाती है। ऐसा न हो तो सिरसे पैरतक कपड़ा लपेटकर सोनेसे आदमी साँस घुटकर मर जाय।

उस दशामें भी थोड़ी बहुत प्राणवायुवाली बाहरकी हवा

मिलती ही रहती है। लेकिन इतनी कम साफ हवासे काम नहीं चल सकता। यदि सिरमें ठण्ढक लगती हो तो सिरपर कुछ डाल लें पर नाकको हर हालतमे बाहर रखना जरूरी है। चाहे जितनी ज्यादा सर्दी पड़ती हो नाक ढककर सोना उचित नहीं।

हवा और उजेलेका इतना घना सम्बन्ध है कि उसके विषयमें दो बातें इसी प्रकरणमें लिख देना आवश्यक जान पड़ता है। जैसे हम हवा बिना नहीं रह सकते वैसे ही उजेले बिना भी नहीं जी सकते। नरकमें अन्धकार अर्थात् उजेलेका अभाव माना गया है। जहाँ प्रकाश नहीं पहुँच सकता वहाँकी हवा सदा खराब रहती है। हम किसी अन्धेरी कोठरीमें घुसें तो उसकी हवामें हमें बदबू मालूम होगी। अन्धेरेमें हम आँखोंका उपयोग नहीं कर सकते, इससे पता चल सकता है कि हम उजेलेमें रहनेके लिये ही पैदा हुए हैं। प्रकृतिने हमारे लिये जितने अन्धेरेकी जरूरत समझी उतनी ही सुखप्रद रात बना दी है। बहुतेरे आदमियोंकी आदत होती है कि कड़ीसे कड़ी गरमीमें भी तहखानेसी कोठरीमें प्रकाश और वायु बन्दकर बैठे या सोये रहते हैं। स्मरण रहे कि हवा और उजेलेके बिना रहनेवाले मनुष्य तेजहीन और कमजोर देखे जाते हैं।

आजकल यूरोपमें ऐसे डाक्टर हैं जो रोगियोंको केवल खूब उजेले और खुली हवामें रखकर ही चङ्गा कर देते हैं। रोगीके केवल चेहरेपर ही हवा और उजाला नहीं पहुँचाते, बल्कि उसे प्रायः नङ्गा रखते है और सारे शरीरके चमड़ेपर हवा और उजेलेका असर पहुँचाते है। सैकड़ों आदमी इस इलाजसे अच्छे हो जाते हैं। हवा और उजेलेके लिये हमें दिन-रात अपने घरकी खिड़कियाँ और दरवाजे खुले रखने चाहिये।

शङ्का हो सकती है कि जब हवा और उजेलेकी इतनी आवश्यकता है तब कोठरियोंमें घुसे रहनेवालोंकी नुकसान क्यों नहीं पहुँचता? पर यह शङ्का विचारपूर्ण नहीं कही जा सकती

क्योंकि हम तो यथासाध्य पूर्ण आरोग्य लाभके पक्षपाती हैं—ज्यों-त्यों करके जिन्दगीके दिन काटनेके नहीं। यह सिद्ध हो चुका है कि जहां लोग थोड़ी हवा और थोड़े उजालेका उपयोग करते हैं वहीं बीमार दिखलाई पड़ते हैं। शहरके लोग गांववालों-से कमजोर होते हैं, उन्हे हवा और उजेला कम नसीब होता है। हवा और उजेलेका विषय आरोग्यके लिये बहुत जरूरी है, हर आदमीको इसपर खूब ध्यान देना चाहिये।

४—पानी

हमारे जीवनके लिये हवाका नम्बर पहला है और पानीका दूसरा। हवाके बिना मनुष्य कुछ ही मिनटतक जी सकता है और पानीके बिना कुछ घण्टो तक और देश कालके अनुसार ज्यों-त्यों कई दिन भी काट सकता है। फिर भी यह निर्विवाद है क दूसरी खुराकोंकी भांति आदमी बहुत दिनोंतक पानी बिना नहीं जी सकता। पीनेके लिये पानी मिलता रहे तो मनुष्य अनाज खाये बिना भी बहुत दिनोंतक निभा सकता है। हमारे शरीरमें ७० प्रति सैकड़ेसे भी अधिक पानी है। पानीके बिना शरीरका वजन ८ से १२ पाउण्डतक होता है। हमारी सभी खुराकमें थोड़ा घना पानी रहता है। पर जो पानी हमारे लिये इतनी जरूरी चीज है, हिसाबसे हम उसकी हिफाजत बहुत ही कम करते हैं। हवा और जल सम्बन्धी लापरवाहीके करण हम लोगोंको महामारी इत्यादि रोग घेरे रहते हैं। लड़ाईमें फंसी हुई फौजोंमे प्रायः कालज्वर फूट निकलता है, बहुधा इसका दोष पानी के मत्थे मढ़ा गया है। क्योंकि लड़ाईमें फौजोंको जहाँ-तहाँका जैसा-तैसा पानी पीना पड़ता है। शहरके आदमियोंमें भी कभी-कभी यह बुखार फूट निकलता है। इसका कारण बहुत बार पानी ही होता है। खराब पानी पीनेसे प्रायः पथरी रोग हो जाता है।

पानी बिगड़नेके दो कारण होते हैं। पहला पानीका ऐसी जगह मिलना जहाँ वह साफ न रह सके और दूसरा हमारा पानी को बिगाड़ना। खराब जगहका पानी बिलकुल न पीना चाहिये और प्रायः हम उसे पीते भी नहीं, पर अपनी गफलतसे खराब किया हुआ पानी पीते नहीं हिचकते, जैसे नदियोंका पानी। इसमें हम अंट-संट चीजें डालते हैं और इसीको नहाने-धोनेके काममें लाते हैं। नियम है कि नहानेके स्थानका पानी कभी पीनेके काममें नहीं लाना चाहिये। नदीका पानी जिस दिशासे आता हो उसी दिशासे ऊपरसे जहाँ कोई नहाता न हो लेना चाहिये। नीचेका भाग नहाने धोनेके लिये और ऊपरका भाग पीनेके लिये रखा जाय। जब कोई फौज नदीके पास छावनी डालती है तो एक आदमी तैनात कर दिया जाता है कि वह उस जगहके बहावके ऊपरी ओर किसी मनुष्यको नहाने-धोने न दे। जान-बूझकर ऐसा करनेवालोंको सजा मिलती है। देशमें जहाँ ऐसा अलग-अलग प्रबन्ध नहीं होता वहां चतुर और परिश्रम स्त्रियाँ प्रायः नदीके रेतमें गढ़ा खोदकर उसमेंसे भरा करती हैं। यह रिवाज बहुत अच्छा है, इससे पानी रेत इत्यादिसे छनकर मिलता है। कुएँका पानी पीनेमें प्रायः जोखिम रहा करती है। कच्चे कुओंमें मल मूत्रका रस जमीनसे छनछन कर मिल जाया करता है। इतना ही नहीं कभी कभी उनमें पचीतक मरकर सड़ जाते हैं। वे प्रायः उनके अन्दर घोंसले बना लेते हैं। कुएँमें ढालवीं जगत न हुई तो पानी भरनेवालोंके पैर इत्यादिका मैल उतरकर पानीको बिगाड़ देता है, इसलिये कुएँका पानी पीनेमें बहुत सावधनीकी जरूरत है। टंकियों (हौजों) में भरा हुआ पानी भी प्रायः खराब होता है। टंकियोंका पानी यदि स्वच्छ रखना हो तो उन्हें ढंके रखना चाहिये, कभी-कभी धोते रहना चाहिये और उन तालाब आदिको जहाँसे उनमें पानी आता हो साफ रखना चाहिये। सफाईकी

कोशिश बहुत ही कम मनुष्य करते हैं। इसलिये पानीके सब दोष दूर करनेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि पानी को पहले आध घण्टे तक उबालें और ठण्ढा करके बिना हिलाये एक दूसरे बरतन में मोटे और साफ कपड़ेसे छानकर पीनेके काममें लावें। पर याद रहे कि इतने हीसे मनुष्य अपने कर्त्तव्यसे मुक्त नहीं हो सकता। सार्वजनिक उपयोगमें आनेवाला पानी जैसे उसकी मिल्कियत है वैसे ही उस मुहल्ले या गांवमें रहनेवालोंकी मिल्कियत है। उस मिल्कियतकी रक्षा संरक्षककी हैसियतसे करनेके लिये वह मजबूर है। उसमें कोई काम ऐसा न होना चाहिये कि सार्वजनिक उपयोगमें आनेवाला पानी खराब हो। उसके द्वारा नदी या कुएँमें किसी प्रकारकी खराबी न पैदा हो अर्थात् उसे चाहिये कि वह पानीके पीनेवाले भागको नहाने-धोनेके काममें न लावे, उसके पास मलमूत्र न त्याग करे, पीनेके काममें आनेवाले पानीके समीप मुरदा न जलावे, उसकी राख आदि उसमें न डाले।

बहुत सम्भाल रखते हुए भी हमें बिलकुल साफ पानी नहीं मिलता। उसमें प्रायः क्षार और सड़ी हुई घास फूस इत्यादिका भाग रहता है। बरसाती पानी सबसे अधिक साफ गिना जाता है, परन्तु हमारे पासतक पहुँचनेके पहलेही हवामें उड़नेवाले रज-कण आदि उसमें मिल जाते हैं। शरीरपर साफ पानीका असर बड़ा विलक्षण होता है। इसीसे कितने ही अंगरेज डाक्टर अपने रोगियोंको 'डिस्टिल्ड' अर्थात् शुद्ध किया हुआ पानी देते हैं। यह पानीकी भाप बनाकर बनाया जाता है। कब्जकी शिकायतवाले यदि इस डिस्टिल्ड पानीका उपयोग करें तो उन्हें इसकी उपयोगिताका प्रत्यक्ष फल मिल सकता है। ऐसा पानी सभी केमिस्ट (विलायती दवा बेचनेवाले) बेचते हैं। डिस्टिल्ड पानी और उसके उपचारोंपर हालमें एक पुस्तक निकली है। उसके लेखककी राय है कि ऊपर दी हुई रीतिसे शुद्ध किया हुआ पानी पीनेसे बहुतेरे रोग मिट सकते हैं। इसमें

अतिशयोक्ति है, लेकिन बिलकुल शुद्ध किये हुए पानीका शरीरपर अधिक असर होना कुछ असम्भव नहीं है।

बहुत आदमी नहीं जानते कि पानी हल्का और भारी दो तरहका होता है। पर इसे जानना चाहिये। जिस पानीमें साबुन मलनेसे फेन तुरन्त न उठे, पानीका रङ्ग भर बदल जाय उसे भारी समझना चाहिये। उस पानीमें क्षार बहुत है। जैसे खारे पानीमें साबुनका उपयोग नहीं हो सकता वैसे ही भारी पानीमें भी उसका उपयोग मुश्किलसे होता है। भारी पानीमें अनाज मुश्किलसे पकता है। भारी पानी पीनेसे अनाज पचनेमें भी कठिनाई पड़नी चाहिये और पड़ती भी है। भारी पानी बहुत ही खारा होता है, हल्का पानी मीठा और स्वादिष्ट रहता है। कुछ लोगोंकी राय है कि भारी पानीमें पोषक पदार्थ अधिक होते हैं, उसके पीनेसे फायदा है, परन्तु अधिकतर हल्का पानी पीना ही ठीक समझा गया है। बरसातका पानी सबसे अधिक साफ और स्वाभाविक समझा जाता है। सब उसे हल्का और काममें लाने योग्य मानते हैं भारी पानीको उबालनेके बाद आध घण्टेतक चूल्हेपर रहने दिया जाय तो हल्का हो जायगा। चूल्हेसे उतारनेपर ऊपर बताई रीतिसे उसकी व्यवस्था करनी चाहिये।

प्रायः पूछा जाता है कि पानी कब और कितना पीना चाहिये? इसका सीधा उत्तर है कि प्यास लगनेपर, प्यास मिटनेभरको पीना चाहिये। खाते समय और खानेके पीछे पानी पीनेमें कोई हर्ज नहीं। हाँ, खाते समय इस विचारसे कि खुराक जल्दी गलेसे उतर जाय पानी पीना ठीक नहीं। यदि खुराक अपने आप गलेके नीचे न उतरे तो समझो कि अच्छी तरहसे कुचली नहीं गई या मेदा उसे माँगता नहीं।

साधारणतः पानी पीनेकी जरूरत नहीं है और न होनी ही चाहिये। जैसे हमारे शरीरकी बनावटमें ७० प्रति सैकड़े पानी है वैसे ही खुराकमें भी है। बहुतेरी खुराकोंमें तो ७० प्रति सैकड़ेसे

भी अधिक पानी रहता है। कोई ऐसा अनाज नहीं है जिसमें पानी बिलकुल न हो। इसके सिवा भोजन पकाते समय तो काफी पानी डालते ही हैं। फिर पानीकी जरूरत क्यों होती है? इसका पूरा उत्तर खुराकके प्रकरणमें मिलेगा। यहाँ संक्षेपमें इतना कहा जा सकता है कि जिन लोगोंकी खुराकमें खोटी प्यास पैदा करने-वाली चीजें—जैसे मिर्चा, मसाला इत्यादि—नहीं रहतीं, उन्हें पानी कम ही पीना पड़ता है। जो ताजे मेवोंसे खुराक पूरी कर लेते हैं, उन्हें खाली पानी पीनेकी इच्छा शायद ही हो। जिसे अकारण ही बहुत प्यास लगती हो, उसे कोई बीमारी समझो।

चाहे जैसा पानी पीते हुए भी अनेक मनुष्योंको कोई हानि न पहुंचती देख कुछ लोग चाहे जैसा पानी पीते दिखाई पड़ते हैं। हवाके बयानमें ऐसी धारणाका समाधान किया गया है। हमारे खूनमें कुछ ऐसे अच्छे गुण हैं जिनसे वह अनेक प्रकारके जहरों-को नष्ट कर डालता है। तेज तलवारको काममें लाकर यदि हम उसकी धार फिरसे तेज न करें तो वह फिर ठीक तौरपर काम नहीं देती, यही हाल खूनका है। हम सदा खराब पानी पीया करेंगे तो खून अन्तमें अपना काम करनेमें असमर्थ हो जायगा।

५—खुराक

हवा, पानी और अन्न तीनों ही चीजें हमारी खुराक हैं; फिर भी साधारणतः हमलोग अनाजहीको खुराक मानते हैं। हम अनाजमें केवल दानोंकी ही गिनती करते हैं। गेहूं, चावल इत्यादि न खानेवालोंको हम अनाज खानेवाले नहीं मानते। कहा जा चुका है कि हवा सबसे पहली खुराक है, इसके बिना काम नहीं चल सकता। यह जरूरी खुराक हम जाने बिना-जाने खाया करते हैं। पानी हवासे घटकर है, पर अनाजसे बढ़कर। इसीलिये प्रकृतिका प्रबन्ध है कि पानी अनाजकी अपेक्षा अधिक सरलतासे मिल सके। अनाज तीसरे और आखिरी दर्जेकी खुराक है।

अन्नके सम्बन्धमें लिखना कुछ कठिन काम है। कौन-सा अन्न कब और कितना खाना चाहिये, इन विषयमें बहुत मतभेद है। लोगोंकी रीतियाँ भिन्न-भिन्न हैं, एक ही अन्नका असर भिन्न-भिन्न लोगोंपर भिन्न-भिन्न दिखाई पड़ता है। ऐसी स्थितिमें निश्चित रूपसे कहना कि यही ठीक है, मुश्किल है, लगभग असम्भव है, दुनियाके कितने ही भागोंमें मनुष्य मनुष्यको मारकर उसका माँस खाता है यह भी उसका अन्न है। कितने ही केवल दूधपर निर्वाह करते हैं। उनका अनाज दूध ही है। कुछ जीव मैला भी खाते हैं, उनका यही अनाज है। हमने इस प्रकरणमें इन सब चीजोंका समावेश अनाज शब्दमें किया है।

अनाज कौनसा खाना चाहिये, इस प्रश्नका ठीक-ठीक उत्तर देना यद्यपि मुश्किल है, फिर भी इस विषयपर विचार करना हर आदमीका कर्त्तव्य है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अनाज बिना शरीरका काम नहीं चल सकता। अन्न प्राप्तिके लिये हम सैकड़ों दुःख सहन करते हैं। इस स्थितिमें यह विचार आवश्यक है कि हम अनाज क्यों खाते हैं? इससे हम इस बातका ठीक-ठीक विचार कर सकेंगे कि हमें कौनसा अनाज खाना चाहिये। यह सबलोग मानेंगे कि लाखमें निन्नानबे हजार नौ सौ निन्नानबे मनुष्य तो केवल स्वादके लिये खाते हैं। इसकी परवा नहीं करते कि खानेके बाद बीमार पड़ जायंगे या अच्छे रहेंगे। बहुतेरे लोग खूब खा सकनेके लिये जुलाबें लेते या पाचक चूर्ण फाँकते हैं। कुछ लोग तो स्वादिष्ट चीजें ठूँस-ठूँसकर पेट भर लेते और खानेके पीछे कै करके फिर उन चीजोंको खानेके लिये तैयार हो जाते हैं। कुछका ढङ्ग तो यह होता है कि वे एक ही बारमें इतना अधिक खा जाते हैं कि फिर उन्हें दो-दो दिनतक भूख नहीं लगती। कुछ लापरवाहीसे खाते-खाते मरतेतक देखे गये हैं। ये सब बातें मैंने अपनी आँखों देखी हैं। मैंने अपनी ही जिन्दगीमें बहुतसे फेरफार देखे हैं जिनमें बहुत कामोंकी याद आनेसे भी

हँसी आती है और बहुतोंको याद करके शरमाना पड़ता है। एक समय था जब मैं सवेरे चाय पीता, दो-तीन घण्टेके बाद नाश्ता करता, एक बजे भोजन करता, फिर तीन बजे चाय पीता और अन्तमें छः-सात बजेके बीचमें फिर पूरा भोजन करता। उस समय मेरी दशा बहुत ही करुणाजनक थी। शरीरपर दूषित मांस खूब लदा रहता था। दवाकी बोतल हमेशा पास रहती। खूब खा सकनेके लिये प्रायः जुलाब लेता और उसके बाद ताकतके लिये कई दवाइयाँ पीता यह सब बातें प्रायः हुआ करती थीं। उस समय मुझमें काम करनेकी जितनी शक्ति थी उससे तिगुनी शक्ति इस समय—जब कि मेरी उमर ढलती हुई है—मौजूद है। उस तरहका जीवन करुणाजनक है और गम्भीरतासे विचार करें तो उसे अधम, पापपूर्ण और धिक्कारयोग समझना चाहिये।

मनुष्य खानेके लिये पैदा भी नहीं हुआ, न खानेके लिये जीता ही है, बल्कि अपने उत्पन्न करनेवालेको पहिचाननेके लिये पैदा हुआ है और इसी कामके लिये जीता है। यह पहचान शरीरकी सहायता बिना नहीं हो सकती और खुराकके बिना शरीरका निर्वाह नहीं हो सकता। इसलिये मनुष्यको खानेकी आवश्यकता पड़ती है। यह उच्चतर विचार है। आस्तिक स्त्री पुरुषोंके लिये इतना विचार काफी है। नास्तिक मनुष्य भी मानते हैं कि आरोग्य रक्षाके लिये इतना ही भोजन करना चाहिये जितनेसे शरीर नीरोग रहे।

पशुपक्षियोंको देखिये, वे स्वादके लिये नहीं खाते। ठूँस-ठूँसके नहीं भरते। भूख लगनेपर भूख भर ही खाते हैं। भोजन पकाते नहीं, प्रकृतिके तैयार किये हुए भोजनसे अपना हिस्सा ले लेते हैं। क्या मनुष्य ही स्वादके लिये पैदा हुआ है? उन जानवरोंमें गरीब और अमीर—कोई-कोई दिनमें दस दफे खाने-वाले और कोई-कोई एक बार भी न पानेवाले नहीं दिखलाई पड़ते। ये बातें सिर्फ मनुष्य जातिमें हैं। फिर भी हमें जानवरोंसे

अधिक बुद्धिमान् होनेका घमण्ड है। इससे सिद्ध होता है कि यदि हम पेटको परमेश्वर मानकर उसकी पूजामें जिन्दगी बितावें तो हम पशुपक्षियोंसे अधिक बेसमझ और बदतर हैं।

भली-भाँति विचार करनेसे मालूम होगा कि झूठ, चोरी और धोखा आदि पापोंका मुख्य कारण हमारी स्वादेन्द्रियकी स्वतन्त्रता ही है। स्वादको वशमें रखनेसे दूसरी बुराइयोंका नाश करना हमारे लिये बहुत आसान हो जा सकता है। लेकिन यहाँ तो हम खूब खाना और स्वादिष्ट पदार्थोंका खाना पाप नहीं समझते। चोरी करने, व्यभिचार करने और झूठ बोलनेपर लोग हमसे घृणा करते हैं, इनपर अनेक नीतिग्रन्थ लिखे गये हैं किन्तु जिनकी स्वादेन्द्रिय वशमें नहीं है उनपर कहीं कुछ नहीं लिखा गया। मानो इन विषयका नीति अनीतिसे कोई सम्बन्ध ही नहीं है। इनका प्रधान कारण यह है, सभी एक ही नावपर बैठे हैं, सभी जीभके गुलाम हैं। तब कैसे हम दूसरेकी बुराई-पर हँस सकते हैं। भला कहीं एक चोर दूसरे चोरके कामपर हँसता है? हमारे पूर्व पुरुष भी स्वादेन्द्रियको बिलकुल अपने वशमें नहीं कर सके, या यों कहिये कि स्वादमें उन्हें दोष दिखाई ही न पड़े। बस इतना लिख दिया कि अपनी इन्द्रियको वशमें रखनेके लिये जहाँतक हो सके मिताहारी होना चाहिये। पर यह नहीं लिखा कि स्वादके कारण और कितनी बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं। सभ्य लोग, चोर, ठग और व्यभिचारी मनुष्यको अपने समाजमें कभी रहने न देंगे, किन्तु वे सभ्यताभिमानी लोग साधारण मनुष्यसे सौ गुना अधिक स्वाद लेते है और इसे बुरा नहीं समझते। आजकल बड़प्पनका अनुमान थालीसे किया जाता है। जैसे डाकुओंके घरमें डाका डालना अपराध नहीं समझा जाता, वैसे ही हम सब स्वादेन्द्रियके गुलाम होनेसे उस गुलामीको बुरा नहीं समझते, उल्टे उसमें आनन्द मानते हैं। व्याह शादीमें हम स्वाद ही के लिये भोजन करते

कराते हैं ! गमी (मरनी) तकमें स्वादसे नहीं चूकते ! त्यौहार आया कि मिठाई पकवान बनना मामूली बात है। मेहमान आया कि कड़ाही चढ़ी। जब-तब अड़ोसी-पड़ोसी, इष्ट-मित्र, सगे-सम्बन्धी इत्यादिको दावत गोठ न देना अथवा उनके यहाँ दावत न खाना महा मनहूसियतमें दाखिल है। निमन्त्रितोंको ठूँसकर न खिलानेमें कंजूसी समझी जाती है। छुट्टी पड़ी कि छनी पूड़ी कचौड़ी। हम माने बैठे हैं कि रविवारको खूब अडकर खानेके लिये हम आजाद हैं। इस प्रकार जो बड़ा दोष है उसे हमने बड़ी समझदारीका काम समझ रखा है। भोजनकी तैयारीमें भी हमने अनेक ढोंग शामिल कर लिये हैं, जिसमें हमारी गुलामी, हमारी पशुता हमारे सामने न आवे। ऐसे घोर अन्धकारसे हम कैसे बच सकते हैं ? यह प्रश्न आरोग्यशास्त्रकी सीमासे बाहर जा रहा है, इसलिये हम यहीं चुप रहते हैं, परन्तु आरोग्यके नाते हर मनुष्यको इसपर खूब विचार करना चाहिये।

अब दूसरी रीतिसे विचार कीजिये। दुनियाका यह कायदा देख पड़ता है कि प्रकृति दुनियाके मनुष्य, पशु, पक्षी और कीड़े इत्यादि सभी प्राणियोंके लिये नित्य खुराक तैयार करती रहती है। प्रकृतिकी इस कार्यप्रणालीमें कोई नवीनता नहीं है। प्रकृतिके दरबारमें भूल-चूकका काम नहीं। वहाँ न कोई ऊँघता, न कोई आलस्य करता। वहाँका कार्य हमेशा एकसा चलता है। इसीसे प्रकृतिको सालभर अथवा दिनभरके लिये अपना भाण्डार नहीं भरना पड़ता। हमारी इच्छाएँ और हमारे कर्त्तव्य भी ऐसे अपवादरहित कानूनके वशमें हैं। हम इस कायदेको समझकर काम करे तो किसी दिन किसी घरमें किसीके भूखों मरनेकी नौबत ही न आवे। विचारने योग्य बात है कि जब हर रोज उतना ही अनाज पैदा होता है जितना संसारके सब जीवोंके लिये काफी है, इससे अधिक पैदा नहीं होता, तब यह प्रत्यक्ष है कि यदि कोई अपने हिस्सेसे अधिक खाले या न खाने योग्य चीज खा जाय तो

दूसरोंके हिस्सेमें उतनी ही कमी पड़ेगी। राजा-महाराजाओं और बड़े-बड़े सेठ साहूकारोंकी रसोईसे उनके नौकर चाकरोंकी आवश्यकतासे कहीं अधिक अन्न पकाया जाता है। यह अधिक अन्न वे दूसरोंके पेटसे लेते हैं। फिर भला दूसरे गरीब क्यों न भूखों मरें? यदि दो कुओंका एक ही स्रोत हो और उनमें आवश्यकता भरके ही लिये पानी आता हो तो यह बात स्पष्ट है कि एकसे पानी अधिक निकलेगा तो दूसरेमें अवश्य कमी पड़ेगी। नियम ठीक है और यह नियम इस लेखकका गढ़ा हुआ नहीं है, बल्कि बड़े बुद्धिमान् पुरुषोंका कहा हुआ है कि हम अपनी सच्ची जरूरतसे जितना अधिक खाते हैं उतना आहार चोरीका है। अखा सोनीने ठीक ही कहा है कि "चोरीका धन और अन्न है कच्चा पारा।" हम स्वादके लिये जितना खाते हैं उतना प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्षरूपसे हमारे शरीरसे अवश्य फूट निकलता है, और उतना ही हमारा आरोग्य नष्ट करता और दुःख देता है। अब हम सरलतापूर्वक विचार कर सकेंगे कि हमें कौनसी चीज कितनी खानी चाहिये।

हमें कौनसी चीज खानी चाहिये, इसके पहले यह देख लेना आवश्यक है कि हमें कौनसी चीज न खानी चाहिये। मुखकी राहसे शरीरके अन्दर जानेवाली चीजोंकी गिनती यदि हम अनाज शब्दसे करें तो शराब, बीड़ी, तम्बाकू, भाँग, चाय, काफी, कोको और मसाला इत्यादि भी अनाज ही हैं।

मुझे अनुभवसे मालूम हुआ है कि ये सब चीजें छोड़नेके लायक हैं, इनमेंसे कुछ चीजोंका अनुभव तो खुद ही किया है और कुछके सम्बन्धमें दूसरोंके अनुभवसे लाभ उठाया है।

शराब और भाँगको हर धर्ममें दूषित ठहराया गया है। फिर भी शायद ही कोई इनके पीनेसे परहेज करता हो। शराबसे हजारों घर धूलमें मिल गये। लाखों आदमियोंका सत्यानाश हो चुका। शराबीको किसी बातका ज्ञान नहीं रहता। प्रायः वह

माता, स्त्री और लड़कीका भेदतक भूल जाता है। शराबसे मनुष्यका मेदा जल जाता है, अन्तमें वह पृथ्वीका भार हो जाता है। शराबी मोरियोंमें पड़े नजर आते हैं। अच्छा मनुष्य भी शराबसे कौड़ीका तीन हो जाता है। इस व्यसनसे घिरे मनुष्य होश-हवास ठीक होते हुए भी निकम्मे दीख पड़ते हैं। मनपर उनका अधिकार नहीं होता, सदा शेखचिल्लियोंकेसे मनसूबे बाँधा करते हैं। इसलिये शराब और इसीकी सगी बहन भाँग दोनों चीजें बिलकुल त्यागने योग्य हैं; इसमें दो मत नहीं हो सकते। कुछ लोग कहते हैं, दवाकी भाँति शराब पीनेमें कोई हर्ज नहीं। परन्तु असलमें इतनीकी भी जरूरत नहीं। यूरोप—जो शराबका घर है—के डाक्टरोंकी भी यही राय है। पहले अनेक बीमारियों-में शराब काममें आती थी, परन्तु वहाँ अब बिलकुल बन्द हो गई है। असलमें तो दवाकी दलील ही निराधार है। शराबके पक्ष-पाती दिखाना चाहते हैं कि जब शराब दवाके काममे आ सकती है तब उसे पीनेके काममें लाना क्या बुरा है। परन्तु विष भी तो दवाकी भाँति काम आता है तो भी कोई उसे खुराककी भाँति बरतनेका विचारतक नहीं करता। हो सकता है, कुछ बीमारियों में शराबसे लाभ पहुँचे, पर हानि इतनी हो चुकी है कि विचार-वान मनुष्यको चाहिये कि जान जाने दे, पर शराब दवाकी भाँति भी न ले। शराबसे इस शरीरकी भलाई होनेमे जहाँ अन्य सैकड़ों मनुष्योंका बुरा होता है वहाँ ऐसे शरीरकी रक्षा न कर उसे नष्ट ही हो जाने देना चाहिये। हिन्दुस्तानमें लाखों मनुष्य ऐसे हैं जो समझमे बुरी चीजोंका प्रयोग कर जीना नहीं पसन्द करते। अफीमका विचार भी शराबके साथ ही करना चाहिये। अफीम-का नशा शराबसे भिन्न है, फिर भी उससे शराबसे कम बुराई नहीं होती। अफीमके फेरमें पड़कर चीन जैसे बड़े राष्ट्रकी प्रजा पायी हुई स्वतन्त्रता खो बैठी। हमारे जागीरदार भी अफीम-के चंगुलमें पड़कर अपनी-अपनी जागीरोंसे हाथ धो बैठे।

शराब भाँग और अफीमकी बुराइयाँ तो साधारण पाठककी भी समझमें तुरन्त आ जाती हैं, पर बीड़ी और तम्बाकूकी नहीं आतीं। बीड़ी और तम्बाकूने मनुष्य जातिपर अपना ऐसा असर जमा रखा है कि उसके मिटनेमें एक जमाना लगेगा। छोटे-बड़े सभी इसके फेरमें पड़े है। अच्छे भलेमानस भी बीड़ी सिगरेटका व्यवहार करते हैं। इनके पीनेमें कोई शरम नहीं समझी जाती। मित्रोंकी खातिरका यह एक महान साधन बन गई हैं। दिन-दिन इनका प्रचार बढ़ता जाता है। सर्वसाधारणको इस बातकी खबर नहीं कि सिगरेटका व्यसन बढ़ानेके लिये सिगरेटके व्यापारी लोग उसकी बनावटमें हजारों तरकीबें लड़ाते हैं। जर्दे तम्बाकूमें अनेक प्रकारके सुगन्धित तेजाब छिड़कते हैं और अफीमका पानी मिलाते है। इससे सिगरेट हमपर अधिकाधिक अधिकार जमाती जाती है। उसके लिये नोटिसबाजीमें हजारों पौंड खर्च किये जाते हैं। यूरोपमें सिगरेटकी कम्पनियाँ अपने छापेखाने चलातीं, बायस्कोप खरीदतीं; अनेक प्रकारकी इनाम बाँटतीं, लाटरियाँ निकालतीं और नोटिसबाजीमें पानीकी तरह पैसा बहाती हैं। फल यह हुआ कि स्त्रियोंतकको सिगरेटकी आदत लग गई है। सिगरेट पीनेपर कविताएँ भी बनायी गई हैं, इनमें सिगरेटको "गरीब नेवाज" (दीनबन्धु) की उपमा दी गई है।

सिगरेट तम्बाकूसे होनेवाली हानियोंकी गिनती नहीं हो सकती। सिगरेट पीनेवाले मनुष्यका व्यसन इतना अधिक बढ़ जाता है कि वह बिना किसीकी परवा किये दूसरेके घरमें बिना इजाजत ही सिगरेटका धुआं उड़ाने लगता है, किसीकी शरम नहीं रखता।

देखा गया है कि सिगरेट और तम्बाकू पीनेवाला मनुष्य इन चीजोंकी प्राप्तिके लिये बहुतेरे अपराधतक कर बैठता है। लड़के माता-पिताके पैसे चुराते हैं, जेलमें कैदी बहुत जोखिम उठाकर सिगरेट रखते हैं। दूसरे आहार बिना काम चल जाता है, सिग-

रेट बिना नहीं। लड़ाईमें सिगरेट पीनेवाले सिपाहियोंको सिगरेट नहीं मिलती तो ढीले पड़ जाते हैं और फिर किसी कामके नहीं रहते।

सिगरेटपर स्वर्गीय टालस्टायने लिखा है कि एक मनुष्यके मनमें अपनी स्त्रीके खून करनेका विचार आया, छुरा निकाला, चलानेको तैयार हुआ, पछताया और पीछे हट गया। फिर सिगरेट पीने बैठा, सिगरेटके जहरसे अक्लपर पर्दा पड़ गया; तब उसने खून किया। मि० टालस्टाय तम्बाकूको एक सूक्ष्म प्रकारका और कई अंशोंमें शराबसे भी खराब नशा मानते थे।

सिगरेटका भी खर्च कुछ कम नहीं। कुछ मनुष्योंको चुरुटके पीछे हर महीने ५ पौंड अर्थात् ७५) रुपयेतक खर्च करते मैंने अपनी आँखों देखा हैं।

सिगरेटसे पाचनशक्ति कम हो जाती है। भोजनका स्वाद नहीं मिलता। अन्न फीका मालूम होता है, इसलिये उसमें मसाला इत्यादि डालना पड़ता है। सिगरेट पीनेवालेकी साँससे बदबू निकलने लगती है। उसका धुआँ हवाको बिगाड़ता है। कितनी ही बार मुँहमे फफोले पड़ जाते है। मसूड़े और दाँत काले या पीले पड़ जाते हैं इससे कितने ही लोगोंको इससे भी भयङ्कर बीमारियाँ हो जाती हैं। समझमे नहीं आता कि शराबके निन्दक सिगरेट क्यों पीते हैं? सिगरेटका जहर सूक्ष्म है, शायद इसीसे उसका प्रयोग करते हैं। जो नीरोग रहना चाहते हैं उन्हें सिगरेट पीना ज़रूर छोड़ देना चाहिये।

शराब, तम्बाकू, बीड़ी और भाँग इत्यादि व्यसन हमारे शरीरका आरोग्य हर लेते हैं; मन और धनके आरोग्यका भी हरण करते हैं। इनसे हमारे आचरणका नाश होता है और हम व्यसनोके गुलाम बन जाते हैं।

लोगोंके मनमें यह बैठना बहुत कठिन जान पड़ता है कि चाय, काफी और कोको बुरी चीजें हैं। पर, चाहे जो हो, कहना

ही पड़ता है कि ये सब चीजें बुरी हैं। इनमें एक विशेष प्रकारका नशा होता है। यदि चाय और काफीके साथ दूध शक्कर न हो तो इनमें एक भी पुष्टिकारक पदार्थ नहीं। केवल चाय और काफी पर जीवन निर्वाह करके कितने ही प्रयोग किये गये। सिद्ध यही हुआ कि इनमें खून बढ़ानेवाली चीजें बिलकुल नहीं हैं। हमलोग कुछ वर्ष पहले साधारण तौरपर चाय और काफी नहीं पीते थे, कहीं किसी विशेष अवसरपर या दवामें इन्हें पी लेते थे, परन्तु अब नई रोशनीके कारण चाय और काफी साधारण वस्तु बन गई है। अब तो हम केवल मिलने आनेवाले मेहमानोंतकको ये सब चीजें पिलाते हैं। चायकी पार्टियाँ देते हैं। लार्ड कर्जनके शासनकालमें तो चायने और भी हाथ पैर फैला दिये हैं। इन साहब बहादुरने चायके व्यापारियोंको उत्तेजना दे देकर चायका प्रचार घर-घर करा दिया और लोग जहाँ पहले आरोग्यकारक चीजें पीते थे वहाँ अब रोगकारी चाय पीने लग गये हैं।

कोको बहुत नहीं फैला, क्योंकि वह चायसे बहुत महँगा है। सौभाग्यसे हम लोगोंको इसका परिचय बहुत कम है, फिर भी फैशनेबल घरोंमें उसकी पूर्ण सत्ता है।

चाय, काफी और कोको तीनों चीजें पाचनशक्तिको कम करनेवाली हैं। ये नशेकी चीजें हैं, क्योंकि जिन्हें व्यसन पड़ जाता है वे छोड़ नहीं सकते। लेखक खुद भी चाय पीता था यदि चायके समय इसे चाय न मिलती थी तो आलस्य मालूम होता था। यह नशेकी पक्की निशानी है। एक उत्सवमें लगभग ४०० स्त्रियाँ और बच्चे इकट्ठे हुए थे। प्रबन्धकोंने तै कर लिया था कि इनको चाय या काफी न देनी चाहिये। जो स्त्रियाँ आई थीं उन्हें ४ बजे चाय पीनेकी अचूक आदत थी। प्रबन्धकोंको खबर मिली कि औरतोंको चाय न मिले तो वे बीमार पड़ जायँगी चल-फिर न सकेंगी। लाचार उन्हें अपना प्रबन्ध बदलना पड़ा। चाय बन ही रही थी कि शोर मच गया, चाय जल्दी चाहिये।

औरतोंका माथा चढ़ा हुआ था, उन्हें पल पल महीनेके सामने मालूम होता था। चाय मिलनेपर इन महिलाओंके चेहरे खिले और उन्होंने होश सँभाला। यह सच्ची घटना है। एक स्त्रीको चायसे इतना नुकसान पहुँचा था कि उसे खाना हजम नहीं होता था, सिर सदा दुखता रहता, पर जबसे उसने अपने मनको वशमें करके चाय पीना छोड़ा तबसे उसकी तबियत बहुत सुधर गई। इङ्गलैंडकी वेटरसी म्यूनिसिपैलिटीके एक डाक्टरने अनुसन्धान करके बतलाया है कि इस इलाकेकी हजारों स्त्रियोंके ज्ञान तन्तुओंमें दर्द होनेका कारण उनका व्यसन है। चायसे मनुष्योंके आरोग्य बिगड़नेके बहुतेरे प्रमाण मुझे मिल चुके हैं। मेरा पक्का मत है कि चायसे आरोग्यको बहुत हानि पहुँचती है। काफीके सम्बन्धमें एक दोहा प्रचलित है—

"कफ छांटे, बादी हरे, करे धातु बल छीन।
रक्तहिं पानी सम करे, दो गुन अवगुन तीन॥"

यह दोहा बिलकुल ठीक मालूम होता है। निस्सन्देह काफीमें कफ और बादी हरनेकी शक्ति है। पर अन्य चीजोंमें भी यह शक्ति मौजूद है। इन कारणोंसे काफी पीनेवाले अदरकका रस पीये तो काफीकी आवश्यकता पूरी हो जायगी। याद रहे कि धातु जैसी अमूल्य चीजको जिस वस्तुसे हानि पहुँचे, जिससे बलका क्षय हो; रक्तको पानी कर दे, उसे त्यागने ही में कल्याण है।

कोकोमें भी ये सब दोष हैं। चायके समान इसमें वह तत्व मौजूद है जो चमड़ेको बिलकुल संज्ञाशून्य बना देता है।

जो लोग आरोग्यमें नीतिका समावेश करते हैं उनके सामने इन तीनों वस्तुओंके सम्बन्धमें नीचे लिखी दलीलें पेश की जा सकती हैं। चाय, काफी और कोको अधिकतर उन मजदूरोंके द्वारा उत्पन्नकी जाती हैं जो शर्त बँधे कुली बनकर चाय-बगीचोंमें जाते हैं। जहाँ कोकोकी उपज होती है वहाँ मजदूरोंपर होते हुए

जुल्मोंको यदि अपनी आँखोंसे देख लें तो उसके ग्रहणकी जरा भी इच्छा न करें। कोकोके खेतोंमें होनेवाले खुल्मोंपर बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। यदि हम सब अपनी खुराककी उप्पत्तिके विषयमे पूरा ज्ञान प्राप्त करें तो १०० मेंसे ९० वस्तुओं-का त्याग अवश्य कर दें।

इन तीनों वस्तुओंके बदले नीचे लिखे ढङ्गसे निर्दोष और पुष्टिकर चाय बन सकती है। इसे चायके नामपर मजेमे पी सकते हैं। काफी और इस निर्दोष चायके स्वादमें इतना कम अन्तर है कि उसे काफी पीनेवाले भी नहीं समझ सकते। पहले गेहूँको साफ तवे या कड़ाहीमें डाल चूल्हेपर भूनना चाहिये। खूब लाल होकर कलछाने लगनेपर उतार दिये जायँ और काफी दलनेकी छोटी चक्कीमें साधारण तौरपर बारीक दल दिये जायँ। इसमेंसे एक चम्मच भरकर प्यालेमें डालकर उसपर उबलता हुआ पानी ढाल दें। यदि इसे एक मिनटतक चूल्हेपर चढ़ा रहने दें तो और भी अच्छा हो। आवश्यकता जान पडे तो दूध और शक्कर भी इसमें मिला ली जाय। दूध और शक्करके बिना भी इसे पी सकते हैं। पाठक इसका प्रयोग कर देख सकते हैं। इसे ग्रहण कर जो लोग चाय, काफी और कोको छोड़ देंगे उनके पैसे बचेंगे और स्वास्थ्य-रक्षा भी होगी। इस पुस्तकके लेखक—सत्याग्रह आश्रम, अहमदा-बाद—से वह चूर्ण मिल सकता है।

बिलकुल छोड़ने योग्य चीजोंपर विचार किया गया। अब उनपर विचार किया जाना चाहिये जो कई कारणोंसे या तो बिलकुल छोड़ने योग्य हैं या जिनका प्रयोग बहुत ही कम होना चाहिये। पर इन विचारोंको अलग रखकर हम इसपर विचार करेंगे कि हमें क्या खाना चाहिये।

खुराकके विचारसे हम दुनियाके तीन बड़ेसे बड़े विभाग कर सकते हैं। पहले विभागमें वे मनुष्य हैं जो अपनी खुशीसे अथवा विवश होकर वनस्पतिसे उत्पन्न चीजोंपर अपना निर्वाह कर सकते

हैं। यह विभाग सबसे बड़ा है। इसमें हिन्दुस्तानका बहुत बड़ा भाग, यूरोपका बहुत भाग और चीन जापानका अधिक भाग आ जाता है। इस भागके बहुत थोड़े लोग केवल धर्मरक्षाके विचारसे वनस्पतिका प्रयोग करते हैं, बाकी लोग मांसादि न मिलनेके कारण ही उनके बिना अपना निर्वाह करते हैं, मौका मिलनेपर ही बड़े मजेसे मांस खाते हैं। इस प्रकारके मनुष्योंमें इटालियन, आइरिश, स्काटलैंडके अधिकांश प्रकारके मनुष्य, रूसकी गरीब प्रजा और चीन, जापान के प्रायः सभी लोग गिने जाते हैं। इटलीके लोगोंका प्रधान भोजन मेकेरोनी, आयर्लैण्डके निवासियोंका पोटेटो (आलू) स्काटलैडवालोंका ओट मील जई) और चीन जापानवालोंका चावल है। दूसरा भाग उन लोगोंका है जो वनस्पतिके साथ कई प्रकारका मांस और मछली आदि एक वा कई बार सदा खाया करते है। इसमें इङ्गलैण्डका अधिक भाग आता है। साथ ही हिन्दुस्तानके मालदार मुसलमान और वे धनी हिंदू जिनमें मांस खाना धर्म दृष्टिसे बुरा नहीं है तथा धनाढ्य चीनी, जापानी भी इसी विभागमे गिने जाते हैं। यह भाग भी बड़ा है, किन्तु पहलेके मुकाबलेमें बहुत छोटा है। तीसरा वह भाग, जिसमें ठंढे देशोंके रहनेवाले बहुतेरे जंगली लोग शामिल हैं जो केवल मांस खाकर अपना जीवन बिताते हैं। यह भाग बहुत ही छोटा है और वह भी ज्यो ज्यों यूरोपके यात्रियोके संसर्गमे आता जाता है त्यों-त्यों अपनी खुराकके साथ वनस्पतिको भी दाखिल करता जाता है। इस विचारसे हम इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि मनुष्य तीन प्रकारसे जी सकता है, परन्तु हमें तो विचार इस बातका करना है कि सबसे अधिक आरोग्य वर्द्धक खुराक क्या है।

शरीरकी बनावटपर विचार करनेसे जान पड़ता है कि प्रकृति ने मनुष्यको वनस्पति खानेवाला बनाया है। अन्य फलाहारी जीवोंकी बनावटसे वह बहुत अधिक मिलता है। बंदरको लीजिये

यह मनुष्यसे मिलता है। इसकी खुराक हरे और सूखे फल हैं। इसके दांत और मेदा दोनों हमसे बिलकुल मिलते हैं। किन्तु सिंह बाघादि फाड़खानेवाले जीवोके दाँत और मेदेकी बनावट हमारे अंगोंसे सर्वथा निराली है। हमारे उनकेसे पंजे नहीं होते। अन्य निरामिष भोजी—जैसे गाय, बैल इत्यादि—पशुओंसे भी हम कुछ-कुछ मिलते हैं, पर ढेरकी ढेर घास खा जानेके लिए उनके जो आंतें इत्यादि हैं वे हमारे नहीं हैं। अनेक वैज्ञानिक इस आधारपर कहते हैं कि मनुष्य मांसाहारी नहीं है। इतना ही नहीं, वह चाहे जिस वनस्पतिके खानेके लिये भी नहीं बना है। उसकी असली खुराक वनस्पतिमें भी फल, फूल और मूल आदि ही होने चाहिये।

वैज्ञानिकोंने सिद्ध किया है कि मनुष्यके निर्वाहके लिये सब अवश्यक तत्व फलोमें मिल सकते हैं। केला, नारंगी, खजूर अञ्जीर, सेब, अनन्नास, अखरोट, मूंगफली और नारियल आदिमें आरोग्यरक्षक और शक्तिदेनेवाले प्रायः सभी तत्व मौजूद हैं। इनके मतसे मनुष्यको खाना पकानेकी जरूरत नहीं है। दूसरे जीव जैसे सूरजकी गरमीसे पकी हुई चीजोंसे अपनी तन्दुरुस्ती कायम रख सकते हैं वैसे ही हमे भी होना चाहिये। पकानेसे वनस्पतिका उपयोगी सत्व नष्ट हो जाता है, उसकी पोषक शक्ति कम हो जाती है। जो वनस्पति हम बिना पकाये नहीं खा सकते वह हमारी खुराक ही नहीं हो सकती।

यदि यह दलील ठीक मानी जाय तो हमारे रसोई बनाने खानेमें जो बहुतसा समय नष्ट होता है वह बच जाय। स्त्रियोंके पास बहुत समय निकल आवे, घरका रसोई आदिमें लगनेवाला भाग भी खाली हो जाय और इसमें हम अनेक बातोंमें इतने अधिक स्वतन्त्र हो जायं कि फिर हम अपने बचे हुए पैसे और समयका बहुत अच्छा उपयोग कर सकें।

कुछ लोग कह सकते हैं कि सबकी रसोई बन्द कर देना

स्त्रियोंको इस कैदसे छुटकारा दे देना या स्त्रियोंका खुद ही छुटकारा पा लेना आदि स्वप्नकीसी बातें हैं, इन असख्य बातोंकी चर्चा व्यर्थ है। पर हम इस समय यह विचार नहीं कर रहे हैं कि सब लोग इस तरह चल सकते हैं या नहीं। विचार यह है कि क्या होना चाहिये। हम आरोग्य-सम्बन्धी बातें जान लेनेपर साधारण आरोग्य प्राप्त कर सकते हैं, इसलिए सर्वोत्तम खुराकके सम्बन्धमें जान लेनेपर ही हम निश्चय कर सकते हैं कि हमें क्या खाना चाहिये।

फलोको बढ़िया खुराक समझ लेनेपर हमें इसका विचार न करना चाहिये कि सब लोग उनका उपभोग करते हैं या नहीं। हमसे हो सके तो हमें करना चाहिये, इसमें मतभेद नहीं हो सकता।

यूरोपमें इस विषयपर बहुत पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। वहाँ बहुत अङ्गरेजोंने फलाहारका अपना अनुभव प्रकाशित किया है। ये सब लोग धर्म नहीं बल्कि आरोग्यके विचारसे फलाहारी बने हैं। जुस्ट नामक एक जर्मनने फलाहारपर एक बहुत ही बढ़िया पुस्तक लिखी है, बहुत दलीलो और प्रमाणोसे फलको बहुत ही उत्तम खुराक साबित किया है। उसने बहुतेरे बीमारोंको सिर्फ फलाहार और खुली हवासे अच्छा किया है। वह यहाँतक कहता है कि जिस देशमें जो फल होते हैं उन्हींमेंसे मनुष्य अपने पोषणके लिये सम्पूर्ण तत्त्व पा सकता है।

यदि मैं यहाँ अपने किये हुए प्रयोगोंका वर्णन करूँ तो अनुचित न होगा। मैंने ६ महीने* से कोई अन्न या दूध, दही नहीं खाया, केवल फलाहार कर रहा हूँ। आजकल मेरी खुराक केला,

* म० गांधीने इस पुस्तकको गुजरातीमें लेख रूपसे दक्षिण अफ्रिकामें अपने इण्डियन ओपीनियनमें लगभग दस वर्ष पहले लिखा था। ७ वर्षतक उनका यह प्रयोग निर्विघ्न चलता रहा। अब इधर दो तीन वर्षसे वे बकरीका दूध, कुछ रोटी और फल ग्रहण करते हैं।
—महावीरप्रसाद प

मूँगफली, खजूर ओलिव आयल* (जैतूनका तेल) नीबू अथवा उसीके समान कोई दूसरा खट्टा फल है। मैं इस प्रयोगको भली-भाँति फलीभूत नहीं कह सकता। इतने बड़े फेरफारोंका असर जाननेके लिये केवल ६ महीने काफी नहीं है। परन्तु इतना तो कहूँगा कि जिस अवसरपर दूसरे लोग बीमार पड़ गये हैं उस समय मेरी तबीयत ठीक रही है। मुझमें पहले जितनी मानसिक और शारीरिक शक्ति थी उसकी अपेक्षा अब विशेष है। शारीरिक शक्तिके सम्बन्धमें इतना कहना चाहता हूँ कि जितना वजन मैं पहले उठा सकता था उतना शायद अब न उठे, परन्तु पहले मैं जितने घण्टे मेहनत कर सकता था उससे अब बहुत अधिक देर-तक बिना थके कर सकता हूँ। मानसिक शक्तिके विषयमें अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं—इतना ही कहना काफी है कि पहलेकी अपेक्षा अब मैं बहुत अधिक मानसिक काम करता हूँ और उसे अन्ततक पहुँचाकर ही छोड़ता हूँ। इस खुराकका प्रयोग मैंने कितने ही बीमारोंपर किया है और उसका परिणाम बहुत अद्भुत दिखाई दिया है। बीमारीके प्रकरणमें मैं उन सबका वर्णन करूँगा। अपने तथा दूसरोके अनुभव और पढ़ने तथा विचारने-से मुझे मालूम होता है कि फल उत्तम खुराक है।

मैं नहीं समझता कि इस प्रकरणको पढ़ते ही लोग फला-हार आरम्भ कर देंगे, मेरे इस लिखनेका असर शायद ही किसी पाठकपर हो, फिर भी अपनी धारणानुसार ठीक लिखना मेरा एकमात्र कर्त्तव्य है।

परन्तु कोई पाठक यदि फलाहारके प्रयोग इच्छा करें तो उन्हें जल्दीबाजी न करके धीमी चालसे चलना चाहिये। इसीमें उनकी भलाई है। सारांश, पहले सब प्रकरण पढ़ और समझकर सार ग्रहण करनेके बाद तब कर्त्तव्यका निश्चय करें।

---

* महात्माजीने ओलिव आयलके स्थानपर हर जगह मूँगफलीका शुद्ध तेल बरतनेकी राय दी है। — महावीरप्रसाद पोद्दार।

अब हम उस खुराकका वर्णन करेंगे जो फलोंके बाद दूसरे दर्जेकी है। मैं समझता हूँ कि खुराक प्रायः सभी लोगोंको पसन्द होगी। और फलोंके वर्णनके बाद खूब समझमें भी आवेगी। पाठकोंसे मेरी प्रार्थना है कि सम्पूर्ण वर्णन पढ़कर ही वे अपने अन्तिम विचार निश्चित करें।

फलाहारसे घटकर दूसरे दर्जेकी खुराक वनस्पति है। इसमें सब प्रकारकी शाक-भाजी, अन्न और दूध इत्यादि शामिल हैं। फलोंकी भाँति वनस्पतिमें भी मनुष्योपयोगी तत्त्व मौजूद हैं, पर दोनोंका असर एकसा नहीं होता। खुराकसे मिलनेवाले कितने ही तत्त्व हवामें मौजूद रहते हैं, पर बना खुराकके हवासे हम अपना काम नहीं चला सकते। वनस्पति पकानेसे असली रूपमें नहीं रह जाती, उसका असर कुछ अवश्य कम हो जाता है, पर हम वनस्पतिको बिना पकाये नहीं खा सकते, इसलिए जब मनुष्यको पकाया हुआ अन्न ही खाना है और शाक-भाजीके बिना उसका गुजारा नहीं, तब देखना चाहिये कि इनमेंसे क्या खाना ठीक है?

अन्नमें गेहूँ सर्वोपरि है। केवल गेहूं खाकर मनुष्य जी सकता है। उसमें सब पोषक चीजें ठीक परिमाणमें मौजूद हैं। गेहूँसे अनेक प्रकारकी चीजें बन सकती हैं और वे आसानीसे पच सकती हैं। बच्चोंके लिये जो बनी बनाई खुराक बिका करती है उसमें भी गेहूँका कुछ भाग होता है। यद्यपि जुवार, बाजरा और मक्का भी गेहूंकी श्रेणीमें गिनी जाती हैं और इन सबकी रोटी और फुलके बन सकते हैं, पर ये अन्न गेहूँकी बराबरी नहीं कर सकते। यहाँ समझ लेना आवश्यक है कि गेहूं खाना कैसे चाहिये? सुफेद आटा जिसे हम 'मिल फ्वलार' या मैदा कहते हैं बिलकुल निकम्मा होता है। उसमें कुछ भी सत्व नहीं रहता। डाक्टर एलिन्सनने इस आटेके विषयमें लिखा है कि मैंने एक कुत्तेको केवल इसी आटेपर रखा था। फल यह हुआ कि वह

मर गया। इसके विरुद्ध दूसरे प्रकारका आटा खानेसे और कुत्ते बिलकुल तन्दुरुस्त रहे। मैदामें गेहूँका छिलका नहीं रहने दिया जाता, पर सारा बल तथा स्वाद छिलकेमें ही है। मैदाकी रोटी-की अधिक खपतका कारण यह जान पड़ता है कि मनुष्य पेट भरनेके साथ-साथ स्वाद भी लेना चाहता है। वह मैदा स्वादके लिए खाता है। जैसे पनीर खानेवालेको केवल उसीसे बल मिल सकता है, पर वह रोटीके साथ पनीर खाता है। अर्थात् उसके खानेका उद्देश्य पुष्ट होना नहीं बल्कि स्वाद लेना है। मैदाके आटेकी रोटी भी खराब होती है। उसमें न तो कोई स्वाद या गुण रहता है और न वह नरम ही होती है। इसकी रोटियाँ प्रायः, ऐसी चिमड़ी हो जाती हैं कि हाथसे तोड़े नहीं टूटतीं। साफ गेहूँका पत्थरकी चक्कीसे घरमें हाथों पीसा हुआ आटा ही सर्वोत्तम होता है। जो लोग पत्थरकी चक्की न ले सकें अथवा किसी कारणसे न पा सकें वे कम दामकी हाथसे घुमानेवाली चक्की रखकर अपना आटा पीस सकते है अथवा बाजारमें 'अन सिफ्टेड वीयर मिल' लेकर उसका उपयोग कर सकते हैं, पिसे हुए आटेको बिना छाने काममें लाना चाहिये। इस आटेकी रोटी स्वादमें मीठी, नरम होती है। मैदाकी अपेक्षा वह अधिक दिनतक चलता भी है, कारण सत्व अधिक होनेसे कम खर्च होता है।

याद रहे कि बाजारकी रोटी बिलकुल निकम्मी होती है। वह बिलकुल सफेद हो या भूरी, उसमें कुछ-न-कुछ मिलावट अवश्य होती है। इसके सिवा उसमें सबसे बड़ा दोष यह होता है कि वह आटेमें खमीर उठाकर बनाई जाती है। बहुतेरे अनुभवी लोग खमीर उठे आटेको हानिकारक बतलाते हैं। बाजारकी रोटियाँ तैयार करते समय तन्दूरपर चरबी चुपड़ी जाती है, इस दृष्टिसे भी वे हिन्दू मुसलमान दोनोंके त्यागने योग्य है। घरकी बनी रोटियाँ अथवा फुलकोंको छोड़कर बाजारू रोटियोंसे पेट भरना आलसीपनकी निशानी है।

गेहूँ खानेका दूसरा और सहज उपाय यह है कि उसे मोटा दलकर दलिया बनाया जाय। दलियेको खूब पकाकर यदि शक्कर और दूधके साथ जायँ तो बहुत स्वादिष्ट होता है। यही नहीं दूसरी खुराककी अपेक्षा वह अच्छा भी है।

चावलमें बिलकुल सत्व नहीं होता और शायद सिर्फ चावल खाकर मनुष्य जी भी न सके। उसके साथ दाल, घी अथवा दूध इत्यादि पदार्थ होनेपर ही निर्वाह हो सकता है। गेहूँमें यह कमी नहीं। केवल पानी में उबाले गेहूँ खाकर भी मनुष्य भलीभाँति तन्दुरुस्त रह सकते हैं।

शाक-भाजी विशेषकर स्वादके लिये खाई जाती है। दस्तावर होनेके कारण इनमें कुछ दर्जेतक खून साफ करनेका गुण है। फिर भी ये खर-तृण जातिकी चीजें हैं इसलिए पचती कठिनाईसे हैं। इनके पचानेमें कोठेको अधिक काम करना पड़ता है। देखा गया है कि अधिक तरकारी खानेवाले मनुष्यका शरीर गठीला नहीं होता, पिलपिले बने रहते हैं। बदहजमी हुआ करती है। अजीर्णकी दवा ढूँढ़ते ही रहते हैं। कुछ शाक तरकारियाँ तो बिलकुल ही घास हैं। इसलिये शाक, तरकारी बहुत ही कम खानी चाहिये।

दालकी किस्मकी चीजें—चना, उड़द, मटर, अरहर, मोथी, मूँग, मसूसर आदि—बहुत भारी होती हैं। इनके पचानेको मेदेमें बहुत आग होनी चाहिये, वैसे इनका पचना कठिन है। इनके खानेसे बार-बार वायु सरता है, इससे साबित होता है कि ये कम हजम होती हैं। ये चीजे प्रायः बादी समझी जाती हैं इसका भी कारण यही है। इनके खानेसे हमे बहुत देरतक भूख नहीं लगती। मजदूरीमे बहुत परिश्रम करनेवाले इन्हें हजम कर सकते हैं और इनसे कुछ लाभ भी उठा सकते हैं। पर हम-लोगोंको जो साधारणतः बहुत ही कम परिश्रम करनेवाले हैं, ज्यादा न खाना चाहिये। मजदूर और गद्देपर बैठनेवालेका भोजन एक ही तरह और एक ही वजनका नहीं हो सकता।

इंगलैण्डके डाक्टर हेग नामक एक बहुत ही विख्यात लेखक-ने बहुतेरे प्रयोगोंके बाद बतलाया है कि दालवाली चीजें बहुत खराब होती हैं। इनसे हमारे शरीरमें एक विशेष प्रकारका एसिड पैदा होता है; जो हमारे शरीरमें अनेक रोग पैदा कर हमें बूढ़ा बना देता है। यहाँ उसके बतलाये हुए कारणोंके उल्लेखकी जरूरत नहीं है। मेरा अपना अनुभव भी यही है कि इन वस्तुओं-के खानेमें नुकसान है, फिर भी जो लोग इनका स्वाद नहीं छोड़ सकते, उन्हें ऐसी चीजें विचारकर खानी चाहिये।

अब हम वनस्पतियोंमेंसे छोड़नेलायक चीजोंका विचार करते हैं। हिंदुस्तानमें प्रायः लाल मिर्चा, दूसरे मसाले—जैसे धनियाँ, जीरा, काली मिर्च इत्यादि खानेकी बहुत चाल है। वह पृथ्वीके और भागोंमें इतनी नहीं है। यदि अफ्रिकाके हब्शि-योंको भी हम अपनी मसाला मिली हुई खुराक खिलावें तो वे यकायक न खायेंगे। उन्हें वह बहुत ही बेस्वाद लगेगी। जो गोरे मसाला खानेके आदी नहीं हैं वे भी हमारी मसालेदार खुराक नहीं खा सकते. और विवश उन्हें खानी पड़े तो उनका मेदा खराब हो जाता है. मुँहमें छाले पड़ जाते हैं। मैंने गोरोंके विषयमें यह खुद आजमाया है। इससे सिद्ध होता है कि मसाले-में कुछ स्वाद नहीं है किंतु बहुत दिनोंसे आदत पड़ी होनेसे हम उसकी गन्ध और स्वादको पसन्द करते हैं पर सिर्फ स्वादके लिये खाना आरोग्यको बहुत हानि पहुँचाता है।

मसाले क्यों खाये जाते हैं? इसे सब मानेंगे कि अधिक खा सकने और भोजन पच जानेके लिये मसाले खाये जाते हैं। मिर्चा, धनियाँ, जीरा इत्यादिमें पेटमें अग्नि उत्पन्न करनेका गुण है, इनसे हमें बहुत भूख लगती मालूम होती है। यदि इससे यह समझा जाय कि खाया हुआ सब पदार्थ पच गया और उससे उत्तम खून तैयार हुआ, तो यह विचार भूलसे भरा समझा जायगा। अधिक मसाला खानेवाले अधिकांश मनुष्योंका मेदा

अन्तमें कमजोर हो जाता है, कितनोंको तो संग्रहणीतक हो जाती है। एक मनुष्य बहुत मिर्चा खानेकी आदतके कारण जवानीमें ही छः महीने खाट सेकर मर गया। इसलिए हमें अपनी खुराकमेंसे मसाला निकाल देना बहुत जरूरी है।

जो बात मसालेके सम्बन्धमें कही गई है वही नमकके सम्बन्धमें भी कही जा सकती है। यह किसीको पसन्द न आवेगी, बल्कि बहुतेरोंको भयङ्कर जान पड़ेगी। फिर भी यह अनुभवकी बात है। विलायतवालोंका मत है कि नमक अन्य बहुतसे मसालोंसे खराब है। वनस्पतिमें तो नमक होता ही है, हमे भोजनमे अलगसे नमक मिलानेकी जरूरत नहीं। खानेकी चीजोंमें उनके असली रूपमें जितना नमक मिला रहता है उतना ही हमारे लिये काफी है, नदी और खानोंसे निकला हुआ नमक हमारे लिये अनावश्यक है। वह शरीरके अन्दर जाते ही पसीने द्वारा अथवा दूसरे तरीकेसे बाहर निकल आता है, शरीरमे उसका कोई खास उपयोग होता नहीं जान पड़ता। एक पुस्तकमें तो यहाँ तक लिखा है कि नमकसे खूनमें खराबी पैदा होती है और जिस मनुष्यने बहुत दिनोंसे नमकका उपयोग न कर दूसरे तरीकोसे अपना शरीर स्वच्छ रखा है उसका खून इतना साफ होता है कि उसपर साँपके काटनेतकका असर नही हो सकता। क्योकि उसके खूनमें ऐसे विष आदि दूर करनेका गुण रहता है। यह ठीक है या नहीं, इसे हम नहीं जान सकते, पर अनुभवसे इतना अवश्य कहा जा सकता है कि खाँसी, अर्श, दमा, रक्तप्रवाह इत्यादि बीमारियोंमें नमक छोड़ देनेसे उसका फायदा तुरन्त दिखलाई पड़ता है। एक आदमीको बहुत दिनोंसे दमा और खाँसी थी। वह नमक छोड़कर इलाज करनेसे जाती रही। नमक छोड़ने पर बुरे असरका कोई उदाहरण मेरी निगाहसे नहीं गुजरा। मुझे तो नमक छोड़े दो वर्षसे अधिक हो गये, कोई बुरा असर तो नहीं, बल्कि कई फायदे दिखलाई पड़ते हैं। अब मुझे पानी कम

पीना पड़ता है। इससे शरीरमें सुस्ती कम रहती है। मेरा खुद नमक छोड़नेका प्रसंग बहुत ही विचित्र था, जिस बीमारीके लिये मैंने नमक छोड़ा, बीमारी बादको अधिक नहीं बढ़ी. सदा एक हदके अन्दर रही। मेरा विश्वास है कि यदि बीमारीमें नमक बिलकुल छोड़ देता तो रोग अवश्य निर्मूल हो जाता।

नमक छोड़नेवालोंको शाक तरकारी और दाल छोड़नी पड़ती है। मैंने बहुतेरे प्रयोगोंमें देखा है कि यह बहुत खलता है। शाक-तरकारी और दालका एकदम छोड़ देना आसान काम नहीं। मुझे जान पड़ता है कि नमक बिना शाक-तरकारी और दालका पचना कठिन है। इसका यह अर्थ नहीं कि नमक पाचनशक्ति बढ़ानेवाली चीज है, पर जैसे मिर्चा खानेसे पाचनशक्ति बढ़ती-सी जान पड़ती है, और अन्त में उससे नुकसान होता है, ठीक वही हाल नमकका है। इसलिये नमक छोड़नेवालोंको शाक तरकारी और दाल अवश्य छोड़ देनी चाहिये। सब लोग इसे आजमा कर देख सकते हैं। जैसे अफीम छोड़नेसे कुछ दिन तकलीफ मालूम होती है और शरीर सुस्त रहता है वैसे ही नमक छोड़नेवालोंको भी कुछ दिनों तक तकलीफ मालूम होगी, पर इससे हिम्मत न हारनी चाहिये, धैर्यसे कुछ दिनोंके बाद फायदा होगा।

मैंने दूधको भी छोड़ने योग्य वस्तुओंमें गिननेका साहस किया है। आधार मेरा अनुभव है। पर यहाँ उसके वर्णन करनेकी जरूरत नहीं है। दूधकी महिमाके सम्बन्धमे हम लोगोंके मनमें इतना अधिक भ्रम समाया हुआ है कि उसके नाशका प्रयत्न करना निरर्थक है। मैं यह नहीं समझता कि पढ़नेवाले इस पुस्तकके सभी विचारोंको कबूल कर ही लेंगे। इस बातकी भी आशा नहीं कि विचारोंको पसन्द करनेवाले चटपट उनके अनुसार बर्तने लगेंगे। जिन्हे जो उचित जान पड़ेगा ग्रहण करेंगे। इस दृष्टिसे दूधके सम्बन्धमें भी अपने विचार प्रकट करना अनुचित नहीं जान पड़ता। बहुतेरे डाक्टरोंने बताया है कि

दूध कालज्वर उत्पन्न करनेवाली चीज है। इस विषयमें अनेक छोटी-छोटी पुस्तकें भी निकल चुकी हैं। दूधमें तुरन्त ही वायुके जीवाणु पड़ जाते हैं तथा आरोग्यको हानि पहुँचानेवाले जीव तुरन्त उत्पन्न होने लगते हैं। इसके सिवा दूधको सुरक्षित रखनेमें हमें बहुत झंझट उठानी पड़ती है। दक्षिण अफ्रिकामें दूधके कारखानोंके लिये कायदे बना दिये गये हैं। इनमें बताया गया है कि दूध कैसे उबालना चाहिये, कैसे रखना चाहिये और बरतन कैसे साफ करने चाहिये। इस दशामें यह विचारना चाहिये कि जिस वस्तुके लिये इतना प्रयत्न करना पड़े—और प्रयत्न न किया जाय तो नुकसान पहुँचे—वह वस्तु ग्रहण करने योग्य है या छोड़ने योग्य?

फिर, दूधका अच्छा या बुरा होना गायकी खुराक और तन्दुरुस्तीपर निर्भर है। डाक्टर लोग प्रमाण देते हैं कि क्षय रोगसे पीड़ित गायका दूध पीनेवालोंको भी क्षय रोग हो जाता है। बिलकुल तन्दुरुस्त गायका मिलना कठिन है, और तन्दुरुस्त न हुई तो उसका दूध रोगी होता है। सब लोग जानते हैं कि जिस रोगसे पीड़ित माताका दूध बालक पीता है वह भी उसी रोगका रोगी हो जाता है। दूध पीनेवाले बच्चोंकी बीमारीमें वैद्य लोग उसकी माको दवा खिलाते हैं उसके दूध द्वारा दवाका असर बच्चेतक पहुँचे। यही बात गायके दूधकी भी है। दूध पीनेवालेकी तन्दुरुस्ती ठीक वैसी ही होगी जैसी दूध देनेवाले पशुकी। जिस दूधमें इतनी विडम्बना—इतना झंझट है, क्या उसका छोड़ देना ठीक नहीं? दूधमें ताकत देनेवाले जो गुण हैं वे और भी बहुतसी चीजोंमें पाये जाते हैं। जैतूनका तेल दूधकी आवश्यकता बहुत कुछ पूरी कर देता है। मीठे बादामको गरम पानीमें थोड़ी देर भिगोकर यदि उसका छिलका निकाल डाला जाय और फिर उसे पीसकर पानीमें घोलकर पी लिया जाय तो उससे दूधके सब अच्छे गुण प्राप्त हो सकते हैं और विशेषता यह होती है

कि दूधकी जोखिम इससे बिलकुल नहीं रहती। अन्तमें प्रकृतिके नियमकी ओर ध्यान दीजिये। बछड़ा कुछ दिनोंतक दूध पीता है, फिर छोड़ देता है, दाँत निकलते ही ऐसी चीजें खाने लगता है जो दाँतसे खाई जाती है। यही मनुष्य जातिके लिये होना चाहिये। हम केवल बचपनमें दूध पीनेके लिये बने हैं। दाँत निकलनेपर हमें सेव इत्यादि हरे फल, बादाम इत्यादि सूखे मेवे या रोटियाँ खानी चाहिये। दूधकी गुलामीसे छूटनेवाला मनुष्य कितना समय और धन बचा सकता है, इस विचारका यह अवसर नहीं। सब लोग अपने अनुभवसे उसका विचार कर सकते हैं। दूधसे उत्पन्न हुई चीजोंकी भी कोई जरूरत नहीं। मट्ठेकी खटाई नीबूसे पायी जा सकती है। दूधके दूसरे सत्व, बादाम इत्यादिके सेवनसे प्राप्त हो जाते है। घीके बदले तेल तो हजारों हिन्दुस्तानी खाते हैं।

आइये, अब तीसरे दर्जेकी खुराकपर विचार करें। यह वनस्पति और माँस मिश्रित है। ऐसी खुराक बहुत आदमी खाते हैं, उनमेंसे बहुतेरोंके पीछे अनेक रोग लगे रहते हैं। बहुतेरे बाहरसे देखनेमें नीरोग भी जान पड़ते हैं। हमारे शरीरके सब अवयव और गठन देखनेसे प्रत्यक्ष हो जाता है कि हम माँस खानेके लिये पैदा नहीं हुए। डाक्टर किग्सफोर्ड और हेगने माँसकी खुराकसे शरीरपर होनेवाले बुरे असरको बहुत स्पष्ट रूपसे बतलाया है। इन दोनोने यह बात साबित की है कि दाल खानेसे जो एसिड पैदा होता है वही एसिड माँस खानेसे पैदा होता है। माँस खानेसे दाँतोको हानि पहुँचती है, सन्धिवात हो जाता है। यहीं तक बस नहीं इसके खानेसे मनुष्यमें क्रोध अधिक उत्पन्न होता है। क्रोधी भी रोगी ही है। हमारी आरोग्यताकी व्याख्यानुसार क्रोधी मनुष्य नीरोग नहीं गिना जा सकता।

चौथे और अन्तिम दर्जेकी खुराक खानेवालों अर्थात् केवल माँस भक्षियोंके भोजनपर विचार करनेकी जरूरत नहीं। उसकी

दशा ऐसी अधम है कि उसका ख्यालकर हम माँस खाना कभी पसन्द नहीं कर सकते। मांसाहारी कभी नीरोग नहीं कहे जा सकते। उनमेंसे जो उन्नत होते अथवा कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं उनका मन वनस्पतिके आहारकी ओर दौड़ने लगता है।

सारांश यह निकला कि केवल फलाहारी थोड़े निकलेंगे। पर सूखे या हरे फल, गेहूँ तथा ओलिव आयल (जैतूतनका तेल) का प्रयोग करने योग्य है और इन वस्तुओं द्वारा मनुष्य अपनी तन्दुरुस्ती कायम रख सकता है। फलोंमें केलेका नम्बर प्रधान है। इसके सिवा खजूर, आलूबोखारा और अञ्जीर भी ताकत देनेवाले हैं। ताजे अंगूर खून साफ करते है। नारङ्गी, संतरा और सफरजनको केलेके साथ मिलाकर रोटीके साथ खा सकते हैं। रोटीमें ओलिव आयल चुपड़नेसे स्वाद नहीं बिगड़ता। ऐसी खुराकमें अड़चन बहुत कम रहती है और खर्च कम पड़ता है, साथ ही नमक, मिर्चा, दूध या शक्करकी जरूरत नहीं पड़ती। शक्कर खाना तो बिलकुल वाहियात है। बहुत मिठाई खानेवालोंके दाँत कमजोर होते हैं। गेहूँ, बादाम, मूँगफली, अखरोट और हर मेवोंसे खाने योग्य अनेक चीजें बनायी जा सकती हैं।

६—कितना और कितनी बार खाना चाहिये ?

इस विषयमें डाक्टरोंमें मतभेद है कि कितना खाना चाहिये? एक डाक्टरकी राय है कि खूब खाना चाहिये। इन्होने भिन्न-भिन्न प्रकारकी खुराकोंका उनके गुणोंके अनुसार वजन भी नियत कर दिया है। दूसरा कहता है मजदूरी पेशा और मानसिक काम करनेवालोंका भोजन परिमाण और गुण दोनोंमें भिन्न भिन्न होना चाहिये। तीसरेका मत है कि मजदूर और बादशाह दोनोंको बराबर खुराक मिलनी चाहिये। यह कुछ आवश्यक नहीं है कि गद्दीधरोंको कम और मजदूरोंको अधिक भोजनकी आवश्यकता हो। पर इतना सब लोग जानते हैं कि कमजोर और ताकतवरोंके भोजनका परिमाण भिन्न-भिन्न होना चाहिये। पुरुष और स्त्रीके

भोजनमें अन्तर होता है, जवान और बच्चे तथा बूढ़े और जवानकी खुराकमें भी अन्तर होता है। एक लेखक तो यहाँतक कहता है कि यदि हम अपनी खुराकको इतना कुचलें कि मुँहमें ही उसका पूरा रस बनकर लार द्वारा वह गलेके नीचे उतर जाय तो हम पाँचसे लेकर दस रुपये भरकी खुराकसे अपना निर्वाह कर सकते हैं। इसने खुद हजारों प्रयोग किये हैं। उसकी पुस्तकोंकी हजारों प्रतियाँ खप चुकी हैं। लोग उन्हें खूब पढ़ते हैं। ऐसी दशामें भोजनका वजन बताना एकदम व्यर्थ जान पड़ता है।

अधिकांश डाक्टरोंने लिखा है कि सैकड़े पीछे निन्यानवे मनुष्य आवश्यकतासे अधिक खाते हैं। यह ऐसी साधारण बात है कि डाक्टरोंके बिना लिखे भी लोग इसे आसानीसे समझ सकते हैं। अतएव यह भय व्यर्थ है कि लोग बहुत ही कम खाकर कहीं बीमार न पड़ जायँ, इसलिये तन्दुरुस्तीके विचारसे भोजनकी एक ऐसी मात्रा नियत कर देनी चाहिये कि जिससे कम किसीको न खाना चाहिये। भोजनका विचार करते समय हमें अपनी खुराक घटानेपर ही ध्यान रखना चाहिये।

जैसा ऊपर बतलाया जा चुका है, खुराकको खूब कुचलनेकी जरूरत है। इससे हम बहुत ही थोड़ी खुराकसे अधिकसे अधिक उपयोगी सत्व ग्रहण कर सकते हैं। इससे हर तरहसे फायदा है। अनुभवी लोगोंका कहना है कि जो मनुष्य पच जाने योग्य परिमाणमें हितकर भोजन करते हैं उन्हें बहुत थोड़ा बँधा हुआ चिकना और दुर्गन्धरहित; सूखा, काले रङ्गका दस्त होता है। जिसे इस प्रकार खुलकर दस्त न होता हो, समझ लेना चाहिये कि उसने अधिक और अहितकर आहार किया है और जो कुछ खाया है उसे खूब कुचलकर मुँहकी लारके साथ मिलने नहीं दिया। इस प्रकार मनुष्य अपने दस्त इत्यादिसे समझ सकता है कि उसने कम खाया है या अधिक। जिन्हें रातमें

सुखकी नींद न आवे, स्वप्न दिखाई पड़े, जीभका स्वाद सवेरे खराब जान पड़े, उन्हें समझ लेना चाहिये कि अधिक खा लिया है। जिन्हें रातको पेशाबके लिये उठना पड़े उन्हे समझ लेना चाहिये उन्होंने प्रवाही चीजें बहुत खा ली हैं। सूक्ष्मतासे निरीक्षण करके हर मनुष्य अपनी खुराकका वजन निश्चित कर सकता है। बहुतेरे मनुष्योंकी सांससे बदबू निकलती है, इससे पता चलता है कि खुराक उन्हे हजम नहीं हुई। कितनी बार देखा गया है कि अधिक खानेवालोंको फुंसियां हो जाती हैं, मुँहासे फूट निकलते हैं और नाकमें दाने पड़ जाते हैं। हम इन सब उपद्रवोंकी परवा नहीं करते। कितनोंको डकारें आया करती हैं, कितनोंको वायु सरा करता है। इन सबकी वजह ? यही कि हमारा पेट पाखाना बना हुआ है, और इस पाखानेकी पेटीको हम अपने साथ लिये फिरते हैं। यदि अवकाशसे इस विषयका खूब विचार करें तो हमें अपनी आदतोंपर घृणा होगी। हमें हर्गिज ज्यादा न खाना चाहिये। दूसरोंके यहाँ खाने और दूसरोंको खिलानेकी बात एकदम छोड़ देनी चाहिये। रिस्तेदारीमें-खाने और खिलानेका नियम पालन करना उचित है, परन्तु उसका ढंग ऐसा होना चाहिये कि जिसमें हम स्वयं सुखी रहें और अपने मेहमानको सुखी रख सके। दावत, गोठ, जेवनारोंका हमें नाम ही भूल जाना चाहिये। इसके लिये तो हमें कसम खा लेनी चाहिये। हम दतवन करनेके लिये किसीको न्यौता नहीं देते, पानी पीनेके लिये किसीको नहीं बुलाते, फिर भोजनहीके लिये देश भर की खाक छाननेकी क्या आवश्यकता है ? वह भी तो शरीरका एक ऐसा ही व्यवहार है। घर कोई मेहमान आया कि उसकी और हमारी दोनोंकी शामत आ गयी। वजह ? यही कि चटोरेपनसे हमने अपनी जीभ खराब कर ली है, इससे खानेको कुछ-न-कुछ बहाना ढूँढ़ा करते हैं। मेहमानको खिलापिलाकर उसके यहाँ खूब खानेकी आशा रखते हैं। खूब पकवान उड़ानेके संयोग हम ढूँढ़कर प्राप्त कर

लिया करते हैं। बहुत डटकर खानेके एक घण्टा बाद यदि हम किसी शुद्ध शरीरवालेको अपना मुँह सूँघनेको कहें और उसके विचार जानें तो हमें अवश्य शरमाना पड़ेगा। ऐसे भी शौकीन लोग हैं जो खानेके बाद ही इसलिये फ्रूट साल्ट पीते हैं कि जिससे और भी अच्छा भोजन कर सकें अथवा जो खाई चीजोंको कै करके फिर माल उड़ानेके लिये जा बैठते हैं।

हम सभी थोड़े बहुत ऐसे ही हैं, इसीसे हमारे महापुरुषोंने हमारे लिये व्रत, उपवास और रोजा इत्यादि नियत कर दिये हैं! रोमन कैथोलिक ईसाइयोंमें भी बहुतसे व्रत उपवास हैं। केवल शरीरके आरोग्यके लिये ही यदि कोई मनुष्य प्रत्येक पाखमें एक दिन उपवास या एक समय भोजन करे तो इसमें कोई बुराई नहीं। इससे उसे बहुत ही फायदा होगा। बहुतेरे हिन्दू चौमासेमें एक ही समय भोजन करनेका व्रत लेते हैं। इसमें सुखपूर्वक रहनेका रहस्य भरा हुआ है। जब हवामें नमी अधिक होती है और सूर्य नहीं दिखलाई पड़ता तब हमारा मादा अपना काम बहुत कम कर सकता है, ऐसे समय मनुष्यको भोजन कम करना चाहिये।

आइये अब कितनी बार भोजनपर विचार करें। हिन्दुस्तानमें असंख्य मनुष्य दो ही बार खाते हैं। मजदूरी पेशावाले अलबत्ता तीन बार खाते हैं। चार बार खानेवाले लोग अङ्गरेजी दवाइयोंके पैदा होनेके बाद निकले जान पड़ते हैं। आजकल अमेरिका और इङ्गलैण्डमें ऐसी सभाएँ स्थापित हो गई हैं जो लोगोंको बतलाती है कि दो बारसे अधिक नहीं खाना चाहिये। इन सभाओंकी सलाह है कि हमें सबेरे कुछ भी नहीं खाना चाहिये। हमारी रातभरकी नींद खुराककी गरज पूरी कर देती है। इसलिये हमें सवेरे खानेके लिये नहीं बल्कि काम करनेके लिये तैयार हो जाना चाहिये। इन सभाओंका मत है कि हमें एक पहर काम करनेके बाद ही खानेके लिये तैयार होना चाहिये। इसलिये ऐसे विचारके मनुष्य दिनमें दो ही समय खाते हैं और बीचमें चाय इत्यादि भी

हीं पीते। इस विषयमें ड्युइ नामक एक बहुत ही अनुभवी डाक्टरने एक पुस्तक लिखकर उपवास करने, सवेरे नाश्ता न करने और फल खानेके लाभ बड़ी ही उत्तमतासे दिखलाये हैं। मैं अपने आठ वर्षके अनुभवसे कह सकता हूँ कि युवावस्था बीतनेके बाद तो दो दफेसे अधिक खानेकी एकदम जरूरत नहीं है। जब मनुष्य शरीरका सङ्गठन पूर्णताको पहुँच रहा हो अथवा पहुँच गया हो तब उसे कई बार या अधिक परिमाणमें खानेकी कोई जरूरत नहीं।

७—कसरत

मनुष्यको हवा, पानी और अन्नकी जितनी जरूरत है उतनी ही कसरतकी भी। हाँ, कसरत बिना मनुष्य बहुत वर्षोंतक जी सकता है और हवा, पानी तथा अन्न बिना नहीं; फिर भी यह सिद्धान्त सर्वमान्य है कि कसरत बिना मनुष्य नीरोग नहीं रह सकता। हमने खुराकका जैसा अर्थ किया है वैसा ही कसरतका भी करना चाहिये। कसरतका अर्थ हाकी, टेनिस, फुटबाल, क्रिकेट और घूमना ही नहीं है, कसरतमात्रके माने हैं शारीरिक और मानसिक काम। जैसे खुराक हाड़ और मांस हीके लिये नहीं, मनके लिये भी आवश्यक है, वैसे ही कसरत शरीर हीके लिये नहीं, मनके लिये भी होनी चाहिये। शारीरिक कसरत न करनेसे वह रोगी रहता है और मनकी कसरत न होनेसे वह भी शिथिल रहता है। मूर्खताको एक तरहका रोग ही समझना चाहिये। कोई बड़ा पहलवान कुश्ती मारनेमें तो बड़ा प्रवीण हो किन्तु मन उसका गँवारोंका सा हो तो उसके लिये नीरोग शब्दका प्रयोग करना भूल है। अङ्गरेजी कहावत है कि नीरोग वही मनुष्य है जिसके नीरोग शरीरमें नीरोग मनका निवास है।

ऐसी कसरते कौन सी हैं? प्रकृतिने तो हमारे लिये ऐसा सुन्दर प्रबन्ध किया है कि हम सदा कसरत करते रह सकते हैं।

शान्तिपूर्वक विचार करनेसे मालूम होगा कि दुनियाका बहुत बड़ा भाग खेतीपर निर्वाह करता है। किसान परिवारको खूब कसरत करनी पड़ती है। रोज आठ-दस घण्टे अथवा इससे भी अधिक काम करनेपर इन्हें खाने-पहनने भरको मिल सकता है। इन्हे मनके लिये अलग कसरते नहीं करनी पड़ती। किसान मूढ़ हो तो कोई काम ही न कर सके। उसे मिट्टीकी पहचान, ऋतु परिवर्तनका ज्ञान, चतुराईके साथ जोतना और साधरणतः चन्दमा सूर्य और तारोंकी गति जाननी चाहिये। शहरका बड़ा भारी बुद्धिमान् भी किसानके यहाँ जाकर निर्बुद्धि सिद्ध होगा। किसान ही यह बता सकेगा कि अमुक बीज कैसे बोया जाता है। उसे आस-पासके रास्तोंका ज्ञान होता है, आस-पासके मनुष्योंको पहचानता है, तारे इत्यादि देखकर वह रातमें भी दिशा पहचान लेता है। विशेष प्रकारके पक्षियोंको इकट्ठा होते और कलोल करते देखकर वह बता सकता है कि पक्षियोंका अमुक काम अमुक बातका सूचक है। किसान अपने कामभरकी खगोल, भूगोल और भूगर्भ विद्या समझता है। उसे अपने बाल-बच्चोंका पालन-पोषण करना पड़ता है, इससे उसे मानव-धर्म-शास्त्रका साधारण ज्ञान होना सिद्ध होता है। पृथ्वीके विशाल भागमें रहनेके कारण वह ईश्वरका महत्त्व सहजमें समझता है, शरीरसे मजबूत होता है, अपनी दवा आप कर लेता है। उसकी मानसिक शिक्षाकी बाबत जिक्र किया ही जा चुका है।

पर सब लोग किसान नहीं बन सकते और न यह प्रकरण किसानोंके लिये लिखा ही जा रहा है। यहाँ व्यापार वा ऐसे अन्य धन्धे करनेवालोंका प्रश्न है कि वे क्या करें। हमने किसानों-की जिन्दगीका कुछ वर्णन यहाँ इसलिये किया है कि जिसमें लोग इस प्रश्नका उत्तर आसानीसे समझ सकें और अपना रहन सहन उन्हींके समान बना सकें हमारा रहन-सहन किसानके रहन-

सहनसे जितना ही भिन्न होगा हम उतने ही अधिक रोगी भी होंगे। किसानके जीवन वृतान्तसे पाठक समझ गये होंगे कि मनुष्यको आठ घण्टे शारीरिक श्रम करना चाहिये और वह ऐसा कि जिसमें मानसिक शक्तियोंको भी काम करनेका अवसर मिल सके। इसमें सन्देह नहीं कि व्यापारी आदिको कुछ मानसिक कसरत करनेका अवसर मिलता है परन्तु यह कसरत एकतरफी होती है। ये लोग किसानके समान खगोल, भूगोल तथा इतिहासका ज्ञान नहीं रखते। इन्हें भावतावको खबर रहती है, मालकी खपत करना खूब जानते हैं, परन्तु इन कामोंसे मानसिक शक्तिपर पूरा जोर नहीं पड़ता और इन धन्धोंमें शरीरको ही अधिक मेहनत पड़ती है।

ऐसे मनुष्योंके लिये पाश्चात्य विद्वानोंने क्रिकेट इत्यादिके खेल लाभदायक बतलाये हैं। उनकी राय है कि वार्षिक उत्सवोंपर भिन्न-भिन्न खेल खेलने चाहिये और मानसिक श्रमके लिये ऐसी पुस्तकें पढ़नी चाहिये जिनमें बहुत ज्यादा सोचने-विचारनेकी जरूरत न पड़े। यह एक ओरकी बात हुई। अब इसकी जाँच होनी चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसे खेलोंसे शरीरकी कसरत हो जाती है, पर ऐसी कसरतोंसे मनुष्यका मन नहीं सुधरता। इसके अनेक उदाहरण हैं। क्रिकेट या फुटबालके अच्छे खिलाड़ियोंकी संख्या देखी जाय तो उनमें कितने अच्छी मानसिक शक्तिवाले मिलेंगे? हिन्दुस्तानके जो राजा महाराजा अच्छे खिलाडी हैं उनकी मानसिक शक्तिके सम्बन्धमें हमें क्या प्रमाण मिले हैं? इसके विपरीत जो अच्छी मानसिक शक्तिवाले हैं उनमें कितने खिलाड़ी हैं? मेरी समझमें मानसिक शक्तिवाले लोगोंमें बहुत ही कम खेलनेवाले दिखलाई पड़ेंगे। विलायतके गोरे आजकल खेलनेमें खूब भाग लेते हैं, उनको उन्हींके महाकवि कपिलिंगने बुद्धिशत्रुकी उपाधि दी है और यह भी कहा है कि ये लोग इङ्गलैण्डके शत्रु बनेंगे।

हमारे भारतीय बुद्धिमान गृहस्थोंका मार्ग निराला ही है—ये मनकी कसरत करते हैं, पर शरीरकी कसरत बिलकुल नहीं करते या कम करते है। इसीसे इन्हें हम असमय खो बैठते हैं, इनका शरीर बराबर मानसिक काम करते रहनेके कारण क्षीण हो जाता है, कोई-न-कोई रोग इनके शरीरमें घर किये रहता है और उनके पुष्ट विचारोंसे देशके लाभ उठानेका समय आते-आते ही वह संसारसे चल देते हैं। इससे मालूम होता है कि शारीरिक या केवल मानसिक कसरत काफी नहीं, न वही कसरत जो अनुपयोगी और सिर्फ खिलवाड़के लिये हो। जिस कसरतसे मन और शरीर दोनोंका सुधार साथ-साथ और हरदम होता रहे वही कसरत अच्छी है और इससे मनुष्य नीरोग रह सकता है। किसानोंमे ये दोनों गुण हैं।

जो किसान नहीं हैं वे क्या करे? क्रिकेट इत्यादि खेलोंसे होनेवाली कसरत ठीक नहीं। इसलिये हमें ऐसी कसरत तलाश करनी चाहिये जिससे किसानका सा कुछ काम हो। व्यापारी तथा अन्य लोग अपने घरके आसपास फुलवारी लगा सकते हैं और उसमे नित्य दो-चार घण्टे खोदनेका काम कर सकते हैं। तो फेरीवालोंका अपने धंधेमे ही कसरत हो जाती है। यह प्रश्न बेफायदा होगा कि हम दूसरेके घरमें रहते हो तो उसकी जमीनमें कैसे काम करे? यह मनकी संकीर्णता है, जमीन चाहे जिसकी हो, हमे खोदने और बोनेसे मिलनेवाले फायदे तो मिलेंगे ही इसके सिवा हमारा घर सुधरा रहेगा। साथ ही हमें सन्तोष भी होगा कि हमने दूसरेकी जमीन ठीक रखी है! जिन्हें जमीन सम्बन्धी कसरतका मौका न मिल सके या जिन्हें वह नापसन्द हो उनके लिये भी दो बातें लिख देनी जरूरी है। जमीनमें काम करनेकी कसरतके बाद सर्वोत्तम कसरत चलना है। इसे कसरतोंकी रानी कहते हैं, और यह बहुत ठीक है। हमारे साधुसन्त बहुत तन्दुरुस्त रहते हैं, इनकी अन्य कसरतोंमेंसे एक यह भी है

कि ये लोग घोड़ा, गाड़ी आदिका उपयोग नहीं करते। अपनी सारी मुसाफिरी पैदल ही करते हैं। थोरो नामक एक बड़े विद्वान् अमेरिकनने चलनेकी कसरतके सम्बन्धमें एक बहुत ही विचार-पूर्ण पुस्तक लिखी है। उसने दिखाया है कि जो लोग समय न मिलनेका बहाना करके घरसे बाहर नहीं निकलते, हिलते डुलते नहीं और सदा लिखने आदिका काम किया करते हैं उन मनुष्यों-के लेख आदि भी वैसे ही रोगी-शिथिल होते हैं जैसे वे खुद होते हैं। अपने अनुभवके सम्बन्धमे उसने लिखा है कि मैं जिस समय अधिकसे अधिक चलता था मेरे उत्तमसे-उत्तम ग्रन्थ उसी समयके लिखे हुए हैं। इसके लिये रोज चार-पाँच घण्टे चलना कुछ बात न थी। जिस प्रकार सच्ची भूख लगनेपर हम कोई काम नहीं कर सकते, पेट-पूजामें ही व्यस्त हो जाते हैं उसी प्रकार हमे कसरत की ऐसी पक्की आदत डाल लेनी चाहिये कि उसके बिना किये हम और काम ही न कर सकें। अपने मानसिक कामोंका नापना हमें पसन्द नहीं, इससे हम यह नहीं देख सकते कि शारीरिक कसरतके बिना किये हुए मानसिक काम नीरस और निकम्मे होते है। चलनेसे शरीरके प्रत्येक भागमे खून तेजीसे दौड़ा करता है, प्रत्येक अङ्गमें हलचल पैदा होती है और सारा शरीर कस उठता है। चलनेसे हाथ-पैर तो हिलते ही हैं, साथ ही बाहरकी शुद्ध हवा भी मिलती है। बाहरके सुन्दर दृश्यों-का आनन्द भी प्राप्त होता है। सदा एक ही जगह और गलियोंमें न चलना चाहिये, खेतों और जंगलोंमें घूमना आवश्यक है वहाँ प्राकृतिक शोभाकी कुछ परख होगी, दो-एक मीलका चलना कोई चलना नहीं कहलाता, दस-बारह मीलका चलना, चलना है। जो लोग रोज ऐसा न कर सकें वे प्रति रविवारको खूब चल सकते हैं। कोई बीमार एक अनुभवी वैद्यके यहाँ दवा लेने गया, अजीर्णका रोगी था। वैद्यने उसे रोज थोड़ा, चलनेकी सलाह दी। बीमारने कहा, मुझमें जरा भी चलनेकी ताकत

नहीं। वैद्यने समझ लिया कि बीमार कम हिम्मत है, वह उसे अपनी गाड़ीपर चढ़ाकर घुमाने ले गया। रास्तेमें उसने जान-बूझकर अपना चाबुक गिरा दिया। सभ्यताकी रक्षाके विचारसे रोगी चाबुक उठानेके लिये उतर पड़ा; इधर वैद्यने गाड़ी हाँक दी। बेचारे रोगीको हाँफते हुए दूरतक गाड़ीके पीछे जाना पड़ा। अब वैद्यने गाड़ी घुमायी और चढ़ाकर उसे कहा कि तुम्हारे लिये चलना दवा थी, इसीसे तुम्हें चलानेके लिये मुझे यह निर्दय व्यवहार करना पड़ा। बीमारको खूब कड़ाकेकी भूख लगी थी, इससे वह चाबुककी बात भूल गया। उसने वैद्यका उपकार माना और घर जाकर सन्तोषपूर्वक भोजन किया। जिन्हें बदहज्मी और उससे उत्पन्न होनेवाली बीमारियाँ हों वे चलनेका प्रयोग आजमा देखें।

६—पोशाक

आरोग्य जैसे आहारपर निर्भर है वैसे ही किसी हदतक पोशाकपर भी। गोरी लेडियाँ मनमानी शोभाके लिये ऐसी पोशाक पहनती हैं जिससे कमर पतली और पैर छोटे रहें। इससे वे अनेक प्रकारकी बीमारियाँ भोगा करती हैं। चीनमें औरतोंके पैर हमारे यहाँके बच्चोंके पैरसे भी छोटे कर दिये जाते हैं। इससे वहाँकी औरतोंकी तन्दुरुस्तीमें बड़ा धक्का लगता है। इन दोनों बातोंसे पाठक समझ लेंगे कि आरोग्यका सम्बन्ध कुछ अंशोंमें पोशाकसे अवश्य है। प्रायः पोशाकका पसन्द करना हमारे हाथ नहीं रहता। हमें अपने बड़े-बूढ़ोंकी पोशाक पहननी पड़ती है और आजकलकी दशाके अनुसार वैसा करना आवश्यक जान पड़ता है। पोशाकका मुख्य उद्देश्य भुलाकर लोग अब उसे अपने धर्म देश और जातिका सूचक मानने लगे हैं। इसके सिवा मजदूर, धनी और बाबू लोगोंकी पोशाक भिन्न-भिन्न होती हैं। इस दशामें

आरोग्यकी दृष्टिसे पोशाकका विचार करना बहुत ही कठिन काम है, फिर भी विचार करनेसे कुछ लाभ ही होगा।

पोशाक शब्दमें जूते और जेवर इत्यादि भी शामिल समझने चाहिये।

पोशाकका मुख्य उद्देश्य क्या है। मनुष्य अपनी प्राकृतिक स्थितिमें कपड़ा नहीं पहनता था, स्त्री-पुरुष केवल अपना गुप्त भाग ढक लेते, बाकी शरीरका सब भाग खुला रखते थे। इससे उनका चमड़ा कठिन और मजबूत हो जाता था। ऐसे मनुष्य हवा और पानीको खूब सह सकते हैं, उन्हें यकायक सर्दी इत्यादि नहीं होती। हवाके प्रकरणमें विचार कर चुके हैं कि हम केवल नथुनोंसे ही हवा नहीं लेते है बल्कि चमड़ेपरके अनेक छेदों द्वारा भी हवा लेते हैं। कपड़े पहनकर हम चमड़ेके इस बड़े कामको रोकते हैं! ठण्ढे देशके मनुष्य ज्यों-ज्यों आलसी बनते गये त्यों-त्यों उन्हें शरीर ढकनेकी जरूरत हुई। वे ठण्ढ न सह सके, और पोशाकका रिवाज चल पड़ा। अन्तमें लोगोंने पोशाकको मनुष्यका आभूषण रूप मान लिया। फिर उससे देश, जाति आदिकी पहचान होने लगी।

असलमें प्रकृतिने मनुष्यके शरीरपर चमड़ेकी बहुत ही योग्य पोशाक दी है। यह मानना कि शरीर नग्न दशामें बुरा मालूम होता है बिलकुल भ्रम है। अच्छेसे अच्छे चित्र तो नग्न दशामें दिखाई पड़ते हैं। पोशाकसे साधारण अङ्गोंको ढककर मानो हम दिखलाते हैं कि इनके दोष छिपानेके लिये हम यह कर रहे हैं, मानो हम प्रकृतिके कामोंमें दोष निकाल रहे हैं। हमारे पास ज्यों-ज्यों पैसा अधिक होता जाता है त्यों-त्यों हम अपनी टीम टाम बढ़ाते जाते हैं। हर तरहसे आदमी अपनी सुन्दरता बढ़ाना चाहता है। शीशेमें मुँह देख-देख अकड़ता है, वाह! मैं कैसा खूबसूरत हूँ। यदि ऐसी-आदतोंसे हम सबकी दृष्टिमें फर्क न पड़ा हो तो हम तुरन्त समझ सकते हैं कि मनुष्यका अच्छेसे अच्छा

रूप उसकी नग्न दशामें दिखाई देता है और उसीमें उसका आरोग्य भी है। एक पोशाक पहनी कि रूपमें उतना ही फर्क डाला। शायद केवल कपड़ोंसे सन्तोष न होनेपर स्त्री पुरुषोंने गहने पहनने शुरू कर दिये। बहुतेरे मर्द भी पैरमें कड़े पहनते हैं। कानोंमें बालियाँ लटकाते हैं और हाथमें अँगूठी पहनते हैं। ये सब गन्दगीके घर हैं। यह समझना बहुत कठिन है कि इनके पहननेमें कौनसी शोभा फटी पड़ती है। इस विषयमें औरतोंने तो हद ही कर दी है। ये पैरोंमें ऐसे भारी-भारी कड़े पाजेब पहनती हैं कि जिनसे पैर उठाना भी कठिन हो जाता है, बालियोंसे कान गूथे रहते हैं, नाकमें भारी नथ लटका करती है और हाथोंमें तो जितने गहने हों उतने ही थोड़े। इस पहिनावेसे शरीरपर बड़ी मैल जमा हो जाती है। कान और नाकमें तो मैलकी हद ही नहीं रहती। हम इस मैली दशाको शृङ्गार समझकर खूब पैसे फूँकते हैं। चोरोंके भयसे जान जोखिममें डालते हुए नहीं डरते। किसीने बहुत ही ठीक कहा है कि अभिमानसे पैदा हुई मूर्खताको हम तकलीफें झेलते हुए जो नजराना देते हैं वह बहुत ही अधिक होता है। ऐसे उदाहरण बहुत लोगोंने अपनी आँखो देखे होंगे कि कानमें फोड़ा होनेपर भी औरतोंने अपनी बालियाँ नहीं उतारने दीं, हाथमें फोड़ा होकर हाथ पक गया फिर भी पहुंची न उतरी अँगुली पककर सूज आयी तब भी हीरा जड़ी अँगूठी मर्द और औरत अपनी अगुलीसे उतार डालना रूपमें फर्क आ जानेका कारण समझती हैं!

पोशाकके सम्बन्धमें अधिक सुधार मुश्किल है; फिर भी हम गहनो और अनावश्यक कपड़ोंको एकदम बिदा कर सकते है। रीति-रिवाजके लिये कुछ कपड़ोंको रखकर बाकीको अलग कर सकते है। पोशाक मनुष्यका आभूषण है, यह वहम जिन लोगोंके मनसे दूर हो गया है वे बहुत कुछ सुधार करके अपना आरोग्य ठीक रख सकते हैं।

आजकल यह हवा बह रही है कि यूरोपकी पोशाक हमारे लिये बहुत अच्छी है, इस पोशाकसे हमारा रोब बढ़ जाता है और लोग हमारा सम्मान करने लगते हैं। इन सब बातोंपर विचार करनेका यह स्थल नहीं। यहाँ तो इतना ही कहना आवश्यक है कि यूरोपकी पोशाक वहांके ठण्डे भागोंके लिए भले ही योग्य हो; किन्तु वह भारतवर्षके लिये उपयोगी नहीं सिद्ध हो सकती। हिन्दुस्तानके लिये चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान, हिन्दुस्तानकी ही पोशाक समुचित हो सकती है। हमारे कपड़े खुले और ढीले ढाले होते हैं, इसलिये उनमें हवा आ जा सकती है। यही नहीं, अधिकतर सफेद होते हैं जिससे सूर्यकी किरणें बिखर जाती हैं। काले रङ्गके कपड़ेमें सूर्यकी गर्मी अधिक मालूम होती है, इसका कारण यह है कि उसमें लगकर किरणें बिखरती नहीं।

हम अपना सिर प्रायः ढके रखते हैं और बाहर जाते समय तो अवश्य ही ढक लिया करते है। पगड़ी तो हमारी पहचान हो गयी है। फिर भी जहाँतक सुभीता हो, सिर खुला रखनेमें ही फायदा है। बाल बढ़ाना और पटिया फाड़ना जङ्गलीपनकी निशानी है। बढ़े हुए बालोंमें धूल, मैल और जूएँ पड़ जाते हैं। कहीं सिरमें फोड़ा हुआ तो उसका इलाज करना भी कठिन हो जाता है। सिरपर साहब लोगोंकेसे बाल बढ़ाना पगड़ी बाँधनेवालोंके लिये बेवकूफी है।

पैरोंके द्वारा भी हम बहुतेरे रोगोंके पंजेमें फँस जाते हैं। बूट इत्यादि पहिननेवालोंके पैर नाजुक हो जाते हैं। उनसे पसीना निकलने लगता है और वह बहुत ही बदबू करता है। जिस मनुष्यको बासकी परख है वह मोजे और बूट पहननेवाले मनुष्यके पास बदबूके मारे उस समय खड़ा नहीं रह सकता, जब वह अपने मोजे और बूट उतार रहा हो। हम जूतोंको पदत्राण या कटकारि कहते हैं; इससे यह सिद्ध होता है कि हमें जब काटों—

में, ठण्ढकमें अथवा धूलमें चलना पड़े तभी जूते पहनना चाहिये और सो भी इस प्रकारके जिनसे केवल तलुवे ढकें, सारा पैर न ढक जाय। इस अभिप्रायको सेंडल (खड़ाऊँदार) जूते भली-भांति पूरा कर सकते हैं। जिनका सिर दुखता हो, जिनका शरीर कमजोर हो, जिनके पैरोंमें दर्द रहता हो और जिन्हें जूते पहननेकी आदत हो, उनके लिये तो हमारी यही सलाह है कि वे नङ्गे पैर चलनेका प्रयोग कर देखें, इससे उन्हे तुरन्त मालूम होगा कि पैर खुले रखने, जमीनपर नङ्गे पैर चलने और उन्हे पसीना रहित रखनेसे हम तत्काल कितना लाभ उठा सकते हैं।

६—गुह्य प्रकरण

पिछले प्रकरणोंको ध्यानपूर्वक पढ़नेवालोंसे मेरी प्रार्थना है कि वे इस प्रकरणको विशेष ध्यानसे पढ़ें और इसपर खूब विचार करें। और प्रकरण भी उपयोगी हैं, किन्तु इस विषयमें इससे बढ़कर दूसरा प्रकरण नहीं मिलेगा। मै पहले कह चुका हूँ कि इस पुस्तकमे एक भी बात ऐसी नहीं है जिसे मैंने स्वयं अनुभव न किया हो, अथवा जिसे मै दृढ़तापूर्वक मानता न होऊँ।

आरोग्यकी बहुतेरी कुञ्जियाँ हैं और उनकी जरूरत है, पर उसकी मुख्य कुञ्जी ब्रह्मचर्य है साफ हवा अच्छी खुराक और साफ पानी इत्यादिसे हम आरोग्य लाभ कर सकते हैं, पर जैसे, जितना कमाएँ उतना उड़ा दे तो कुछ बचत नहीं होती, वैसे ही हम जितना आरोग्य लाभ करें उतना ही नष्ट कर दे तो क्या बचत होगी? इसलिये स्त्री और पुरुष दोनोंको आरोग्यरूपी धन-सञ्चयके लिये ब्रह्मचर्यकी पूर्ण आवश्यकता है। इसमें किसीको कुछ भी सन्देह नहीं हो सकता। जिसने अपने वीर्यकी रक्षा की है वही वीर्यवान्, बलवान कहा और गिना जा सकता है।

ब्रह्मचर्य क्या है? पुरुष स्त्रीका और स्त्री पुरुषका भोग न करे यही ब्रह्मचर्य है। 'भोग न करनेका' इतना ही अर्थ नहीं है कि

एक दूसरेको विषयकी इच्छासे स्पर्श न करे, बल्कि इस विषयका विचार भी न करे, यहाँतक कि इसके सम्बन्धमें स्वप्न भी न देखे। पुरुष स्त्रीको और स्त्री पुरुषको देखकर विह्वल न हो जाय। प्रकृतिने हमें जो गुप्तशक्ति प्रदान की है उसे दबाकर अपने शरीरमें ही संग्रह कर हमें उसका उपयोग अपने आरोग्य बढ़ानेमें करना चाहिये और वह आरोग्य केवल शरीरका ही नहीं, मन बुद्धि और स्मरणशक्ति का भी होना चाहिये।

आइये, अब जरा देखें कि हमारे चारों ओर क्या तमाशा हो रहा है? छोटे-बड़े सभी स्त्री-पुरुष प्रायः इस मोहनदमें डूबे पड़े हैं। हम प्रायः कामेन्द्रियके गुलाम बन जाते हैं। बुद्धि ठिकाने नहीं रहती, आँखोंपर परदा पड़ जाता है, कामान्ध हो जाते हैं। कामपीड़ित स्त्री-पुरुष, लड़के-लड़कियोंको मैंने बिलकुल पागल समान देखा है। मेरा अपना अनुभव भी इससे भिन्न नहीं है। जब-जब मैं इस दशाको पहुँचा हूँ तब-तब मैं अपनी सुध-बुधतक भूल गया हूँ। यह चीज ही ऐसी है। एक रत्ती सुखके लिये हम मन भरसे भी अधिक बल पलभरमें खो बैठते हैं। मद उतरनेपर हमारी बुरी हालत हो जाती है। दूसरे दिन सवेरे हमारा शरीर भारी रहता है, सच्चा आराम नहीं मिलता, शरीर सुस्त मालूम होता है, मन ठिकाने नहीं रहता; उसके लिए हम दूधका काढ़ा पीते हैं, गजबेलिका चूर्ण और याकूतियाँ (मोती पड़ी हुई पुष्टिकारक दवाइयाँ) खाते हैं, वैद्योंके पास जाकर ताकतकी दवा माँगते हैं, सदा इस तलाशमें रहते हैं कि क्या खानेसे कामदीपन होगा? यों ही दिन और वर्ष बिताते-बिताते हम शरीर और बुद्धिसे हीन होते जाते हैं और बुढ़ापेमें तो बिलकुल अक्ल खो बैठते हैं।

किन्तु वास्तवमें बुद्धि बूढ़ी में मन्द होनेके बदले तेज होनी चाहिये। हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि इस शरीर द्वारा प्राप्त अनुभव हमारे तथा दूसरोंके लिये उपयोगी हो सकें।

ब्रह्मचर्य पालन करनेवालोंकी ऐसी ही स्थिति रहती है। उन्हें मृत्यु-भय नहीं सताता और वे मरते दमतक ईश्वरको नहीं भूलते। वे मृत्यु समयमें हायतोबा नहीं मचाते। हँसते-हँसते शरीर छोड़ मालिकको अपना हिसाब देने चले जाते हैं। वही सच्चे पुरुष हैं और इसी प्रकार मरनेवाली स्त्री सच्ची है। इन्हींकी आरोग्य-रक्षा ठीक समझी जायगी।

हम साधारणरूपसे यह नहीं सोचते कि इस दुनियामें प्रमाद, मत्सर, अभिमान, आडम्बर, क्रोध, अधीरता आदि विषयोंका कारण ब्रह्मचर्यका भङ्ग ही है। मन वशमें न रहनेसे और रोज एक या अधिक बार बच्चोंसे भी अधिक नादान बन जानेसे हम जान या अनजानमें कौनसा अपराध न कर बैठेंगे, कौनसा घोर कर्म करते हुए आगा-पीछा सोचेंगे?

पर किसीने ऐसा ब्रह्मचर्य देखा है? सब लोग ऐसा ब्रह्मचर्य पालने लगें तो संसारका सत्यानास न हो जाय? इसमें धार्मिक विषय आ जानेकी सम्भावना है, इसलिये उतना भाग छोड़कर यहाँ केवल सांसारिक दृष्टिसे विचार किया जायगा। हमारी समझमें इन दोनों प्रश्नोंकी जड़ हमारी कमजोरी और मिथ्या भय है। हम ब्रह्मचर्य पालन करना नहीं चाहते इसलिये उसमेंसे निकल भागनेके बहाने ढूँढ़ा करते हैं। ब्रह्मचर्य पालन करनेवाले दुनियामें बहुत हैं, पर यों ही मिल जायँ तो उनका मूल्य ही क्या रहे? हीरेकी तलाशमें हजारों मजदूरोंको पृथ्वीके अन्दर खानोंमें घुसना पड़ता है, तब कहीं पर्वताकार कङ्कड़ियोंसे केवल मुट्ठीभर हीरे मिलते हैं, तब ब्रह्मचर्य पालन करनेवाले हीरोंकी खोजमें कितना प्रयत्न करना चाहिये, यह बात सब लोग त्रैराशिक बाँधकर उसके उत्तर द्वारा समझ सकते हैं। ब्रह्मचर्य पालन करनेमें यदि दुनिया नाश हो जाय तो इससे हमें क्या? हम ईश्वर नहीं हैं कि दुनियाकी चिन्ता करें। जिसने उसे बनाया है वह सँभालेगा। यह देखनेकी भी जरूरत नहीं कि और लोग

ब्रह्मचर्य पालन करते हैं या नहीं। हम व्यापार, वकालत और डाक्टरी आदि पेशोंमें पड़ते समय कभी इसका विचार नहीं करते कि यदि सब लोग व्यापारी, वकील अथवा डाक्टर हो जायँ तो क्या हो ? जो स्त्री-पुरुष ब्रह्मचर्यका पालन करेंगे, उन्हें अन्तमें समयानुसार दोनों प्रश्नोंका उत्तर अपने आप मिल जायगा, अर्थात् उनके समान दूसरा उन्हे मिल रहेगा और सब लोग ब्रह्मचर्य पालने लगें तो दुनियाका क्या होगा यह भी उनकी समझमें आ जायगा।

सांसारिक मनुष्य इन विचारोंको कैसे काममें ला सकते है ? विवाहित क्या करें ? बाल-बच्चेवालोंको कैसे चलना चाहिये ? कामशक्ति जिनके वश नहीं रहती वे क्या करे ? इस विषयमें जो सबसे उत्तम उपाय बतलाया जा चुका है उस आदर्शको सामने रखकर हम ठीक वैसा ही अथवा उससे घटकर कर सकते हैं। लड़कोंको जब अक्षर लिखना सिखाया जाता है तो उन्हे अक्षर-का उत्तमसे उत्तम नमूना दिया जाता है, वे अपनी शक्तिके अनुसार उसकी हूबहू या उससे मिलती जुलती नकलें उतारते हैं, हमें भी चाहिये कि अखण्ड ब्रह्मचर्यका नमूना अपने सामने रखकर उसकी नकल उतारे और अभ्यास द्वारा क्रमशः उसमें पूर्णता लाभ करें। विवाह भले ही हुआ करे, प्रकृतिके नियमानुसार स्त्री-पुरुषको सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा होनेपर ही ब्रह्मचर्य तोड़ना चाहिये। जो लोग इस प्रकार विचार कर दो-चार छः वर्षमें कहीं एक दफे ब्रह्मचर्यका नियम भङ्ग करेंगे वे बिलकुल कामान्ध नहीं बनेंगे और उनके पास वीर्यरूपी पूँजी ठीक तौर-पर इकट्ठी रह सकेगी। ऐसे स्त्री-पुरुष भाग्य हीसे मिलेंगे जो सन्तान उत्पन्न करनेके लिये ही काम भोग करते हैं, बाकी हजारों मनुष्य तो विषय-वासना तृप्त करनेके लिये ही करते हैं और परिणाममें उनकी इच्छाके विरुद्ध सन्तति उत्पन्न होती है। इस विषय-भोगके समय हम ऐसे अन्धे हो जाते हैं कि आगेका

विचार ही नहीं करते। इस विषयमें स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुष अधिक दोषी हैं। पुरुष अपने प्रागल्पनमें आकर एकदम यह भूल बैठते हैं कि स्त्री दुर्बल है और उसमें सन्तानके पालन-पोषणकी शक्ति नहीं है। पश्चिमके लोगोंने तो इस विषयमें हद ही कर दी है। वे अपने भोग-विलासों और सन्तान उत्पन्न होनेकी दशामें उनके बोझसे बचनेके लिये अनेक उपचार करते हैं। वहाँ इस विषयपर अनेक पुस्तकें लिखी गयी हैं, वहाँ ऐसे पेशेवर भी पड़े हैं जो लोगोंको बतलाते हैं कि अमुक काम करनेसे विषय भोग करते हुए भी सन्तति न उत्पन्न होगी। हमलोग अभी इस पापसे मुक्त हैं पर अपनी स्त्रियोंपर बोझ लादते समय हम सन्ततिके निर्बल, वीर्यहीन, पागल और निर्बुद्धि होनेकी जरा भी परवाह नहीं करते। सन्तति होनेपर ईश्वरका उपहार मानते हैं। अपनी दरिद्र दशा ढकनेका हमने यह एक मार्ग निकाल लिया है।

कमजोर, लूली, लँगड़ी, विषयी और निस्सत्व सन्ततिका होना ईश्वरीय कोप ही है? बारह वर्षकी लड़कीके सन्तान हो इसमें हमारे आनन्द मनानेकी कौनसी बात धरी है कि जिसके लिये ढोल पीटे जायँ। बारह वर्षकी लड़कीका माता बन जाना ईश्वरका महाकोप है या और कुछ? तुरन्तके बोये हुए पेड़में जो फल लगते हैं वे कमजोर होते हैं, यह सब लोग जानते हैं। यही कारण है कि हम तरह-तरहके उपाय करके उनमें फल नहीं लगने देते। पर बालक स्त्री और बालक वरसे सन्तान उत्पन्न होनेपर हम आनन्द मनाते हैं। यह हमारी मूर्खता नहीं तो और क्या है? हिन्दुस्तानमें अथवा दुनियाके किसी हिस्सेमें अगर कमजोर चीटियोंके समान आदमी बढ़ जायँ तो उनसे हिन्दुस्तानका अथवा आदमीका क्या लाभ होगा? हमसे तो वे पशु ही भले हैं जिनमें नर और मादाका संयोग तभी कराया जाता है जब उनसे बच्चे उत्पन्न कराने होते हैं। स्त्री-पुरुषका संसर्ग होनेसे लेकर उस

समयतकको बिलकुल पवित्र समझना चाहिये जबतक बच्चा मांके पेटसे उत्पन्न होकर दूध पीना न छोड़-दे। इस कालमें स्त्री और पुरुषको ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये। पर हम इसके विषयमें जरा भी विचार न कर अपना काम किये ही जाते हैं। यह मनका असाध्य रोग है। यह रोग मौतसे हमारी भेंट कराता है और मौतके पहले तक हमारा मन हमें शेखचिल्ली बनाये रहता है। इसलिये विवाहित स्त्री-पुरुषोंका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि वे विवाहका झूठा अर्थ न कर सच्चा अर्थ करे और जब सचमुच सन्तान न हो तभी वश चलानेकी इच्छासे ही सन्तान पैदा करें।

हमारी वर्त्तमान करुण दशामें ऐसा करना बहुत ही कठिन है। हमारी खुराक, रहन-सहन, बात-चीत, आस-पासके दृश्य ये सभी हमारी विषय-बासनाको जागृत करनेवाले हैं। हमें हरदम विषयका नशा चढ़ा रहता है। कुछ लोग शंका करते हैं कि जब यह हालत है तब आदमी विचार कर भी इस रोगसे कैसे बच सकता है? पर यह लेख ऐसे मनुष्योंके लिये नहीं लिखा गया है जो सोचते फिरें कि कर्त्तव्य कैसे किया जाय, यह उनके लिये है जो विचार करने योग्य बातको करनेके लिए तैयार हों, अपनी स्थितिमें सन्तोष मान बैठनेवालोंको तो इसका पढ़ना भी बुरा मालूम होगा। अपनी दीनदशा समझकर उससे उकताये हुए लोगोंकी मदद करनेके लिये ही यह लेख लिखा गया है।

इन बातोंसे हम समझ सकते हैं कि अविवाहितोंको ऐसे कठिन कालमें विवाह न करना चाहिये और बिना विवाह काम न चल सके तो जहाँतक सम्भव हो देरसे विवाह करें। युवा पुरुष पचीस-तीस बरसतक विवाह न करनेका 'प्रण' कर सकते हैं। इससे आरोग्य प्राप्तिके सिवा और जो फायदे होंगे, उनका विचार हम यहाँ नहीं कर सकते, लोग चाहे तो उन्हें खुद आजमा सकते हैं।

इस प्रकरणको पढ़नेवाले माता-पितासे मैं इतना कहूँगा कि

अपने लड़कोंका बचपनमें विवाह करना मानो उन्हें एक तरहसे बेच डालना है, इससे वे बातक बनते हैं, अपने लड़कोंका हित देखनेके बदले अपना अन्ध स्वार्थ अधिक देखते हैं। बड़प्पनके लिये भाई विरादरीमें नाम पानेके लिये बच्चेको व्याह कर तमाशा देखते हैं। बच्चोंका कल्याण चाहनेवालोंको उनकी शरीरिक, मानसिक, आचारिक उन्नति और शिक्षाकी ओर ध्यान देना चाहिये। इस जामानेमें बच्चोंको बचपनमें व्याह कर गृहस्थीके जजाल और जिम्मेदारीमें डाल देनेसे बढ़कर उनका और अधिक अहित क्या हो सकता है?

आरोग्यशास्त्रके नियमसे तो विवाहित स्त्री-पुरुषके जोड़ेमेंसे एकका देहान्त हो जानेसे दूसरेको अपना विवाह न करना चाहिये। कुछ डाक्टरोंकी सम्मति है कि जवान पुरुष और स्त्रीको वीर्यपातका अवसर मिलना चाहिये। कितने ही डाक्टर इसके विरुद्ध यह भी कहते हैं कि किसी भी स्थितिमें वीर्यपात की जरूरत नहीं है। इस तरह डाक्टरोंमें बड़ा मतभेद देख पड़ता है। अब यह समझकर कि एक पक्षके डाक्टरोंके विचार हमारे विचारोंका पोषण करते हैं, विषयमें लीन रहना सर्वथा अनुचित है। मै अपने निज तथा दूसरेके अनुभवके बलपर निस्सङ्कोच कह सकता हूँ कि आरोग्यरक्षके लिये विषयभोगकी जरूरत नहीं। यही नहीं बल्कि विषयभोगसे वीर्यपात होनेपर आरोग्यको बहुत बड़ी हानि पहुँती है। बहुत वर्षोंकी बंधी हुई मन और तनकी मजबूती एक बारके वीर्यपातसे ही इतनी जाती रहती है कि उसे फिरसे प्राप्त करनेमें बहुत समय चाहिये और उतने समयमें भी निश्चय नहीं कि असली स्थिति आ जाय। टूटे शीशेको जोड़कर काम भले ही चला लिया जाय परन्तु वह समझा जायगा टूटा ही।

वीर्यरक्षाके लिये—जैसा कि पहले कहा जा चुका है—साफ हवा, साफ पानी, हितकर स्वच्छ भोजन और शुद्ध विचारकी

बड़ी जरूरत है। आचरण और आरोग्यका इतना घना सम्बन्ध है कि पूर्णरूपसे सदाचरण सम्पन्न मनुष्य ही पूर्ण आरोग्य प्राप्त कर सकता है। जब जागे तभीसे सवेरा समझ ऊपर लिखी बातों-को खूब सोचकर जो लोग तदनुसार आचरण करेंगे उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होगा। जिन्होंने थोड़े समयतक भी ब्रह्मचर्यका पालन किया है उन्हे भी अपने मन और शरीरके बढ़े हुए बलका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ होगा और वे इस पारसमणिकी प्राणकी भाँति यत्नपूर्वक रक्षा करेंगे। जरा भी चूकनेपर उन्हें तुरन्त भद्दी भूल मालूम हो जायगी। मैंने तो ब्रह्मचर्यके अनेक लाभ अनुभव किये हैं। विचारने तथा जाननेके बाद भी भूलें की हैं और उनका बुरा फल भी भोगा है। भूल करनेसे पहलेकी अपनी मानसिक स्थिति और भूलके बादकी दशाका जब-जब मुझे स्मरण आता है, तब-तब सामने उनका चित्र-सा खिच जाता है। परन्तु मैंने अपनी भूलोंहीमेंसे इस पारसमणिका मूल्य जाना है। मालूम नहीं आगे भी इसका अखण्ड रूपसे पालन कर सकूँगा या नहीं। हाँ, ईश्वरकी सहायतासे इसकी रक्षा सम्भव है। इससे होनेवाले मानसिक और शारीरिक लाभोंका अनुभव मैंने किया है। मैं लड़कपनमें ही व्याहा गया और विषयान्ध बन-कर बच्चोंका बाप बना। बहुत दिनोंतक इस प्रकार जीवन बिताने-के बाद मेरी आँखें खुलीं तो अपनेको घोर अन्धकारमें निमग्न पाया। मेरी भूलों और अनुभवोंसे यदि एक भी मनुष्य चेतकर बच सकेगा तो मैं यह प्रकरण लिखकर अपनेको कृतार्थ समझूँगा। मुझमें उत्साह बहुत है। यह बहुत लोगोंने कहा है और मैं भी मानता हूँ। मेरा मन कमजोर नहीं गिना जाता—कुछ लोग तो मुझे हठीतक कहते हैं। मेरे शरीर और मनमें रोग मौजूद है, फिर भी अपने साथियोंमें मैं भला-चंगा गिना जाता हूँ। जब बीस वर्षतक थोड़े या घने विषयमें पड़े रहनेके बाद भी मैं ब्रह्म-चर्य द्वारा ऐसी स्थिति प्राप्त कर सका तो मै यदि इन बीस वर्षोंमें

भी ब्रह्मचर्यसे रह सकता तो मेरी कैसी अच्छी स्थिति होती ! तब तो आज मेरे उत्साहका पार न होता और जनताकी सेवा या अपने स्वार्थमें वह उत्साह दिखला सकता जिसके उदाहरण कठिनाईसे मिलते। मेरे साधारण उदाहरणसे इतना सारांश निकाला जा सकता है। जिन लोगोंने अखंड ब्रह्मचर्यका पालन किया है उनकी शारीरिक, मानसिक और आचारिक शक्तिका विचार केवल वही लोग कर सकते हैं जिन्होने उन्हें देखा हो। वर्णन होना असंभव है।

पाठकोंने समझ लिया होगा कि जब विवाहित स्त्री-पुरुषोंको ब्रह्मचर्य पालन करनेकी सलाह दी गई है और रण्डुओं तथा विधवाओंको ब्रह्मचर्यका पालन आवश्यक बतलाया गया है तब विवाहित या अविवाहित पुरुष-स्त्रियोंके अन्यत्र विषय-सेवनकी तो बात ही नहीं कही जा सकती। वेश्या अथवा पराई स्त्रीपर कुदृष्टि करनेसे कैसा घोर परिणाम होता है, इसका विचार आरोग्य सम्बन्धी बातोंके साथ नहीं किया जा सकता, यह धर्म और सूक्ष्म नीतिका विषय है। यहाँ केवल इतना ही कहा जा सकता है कि पर स्त्री अथवा वेश्यागमनसे मनुष्य गरमी आदि नाम न लेने योग्य नीच बीमारियोंसे पीड़ित होकर सड़ते देखे जाते हैं। प्रकृतिके दरबारसे ऐसे स्त्री-पुरुषोंको तुरन्त ही सजा मिल जाती है, उनके पाप फूट निकलते हैं, खाट पकड़नी पड़ती है। डाक्टरोंके दरवाजेकी खाक छाननी पड़ती है। जहाँ परस्त्री गमन नहीं होता वहाँ ५० प्रति सैकड़े डाक्टर और वैद्य निकम्मे हो जाते हैं। इन बीमारियोंमें मनुष्य जातिको इस तरह घिरे देखकर विचारशील डाक्टरोंको कहना पड़ा है कि यदि परस्त्री गमनका सपाटा यों ही चलता रहा तो दवा करते-करते भी सन्तान नाशकी सम्भावना बनी ही रहेगी। इन रोगोंकी दवाइयाँ तनी जहरीली होती हैं कि असली बीमारी दूर हो जानेपर भी वे शरीरमें और भी बहुतसे ऐसे दूसरे रोग उत्पन्न कर देती हैं जो पीढ़ी दर पीढ़ी चले जाते हैं।

अब विवाहित स्त्री-पुरुषोंको ब्रह्मचर्य पालन करनेके उपाय बताकर इस आवश्यकतासे अधिक बढ़े हुए प्रकरणको समाप्त करना चाहिये। विवाहित स्त्री-पुरुष खुराक, हवा और पानीके नियमोंका पालन करके ही ब्रह्मचर्यकी रक्षा नहीं कर सकते। उन्हें एक दूसरेके साथ एकान्तवास छोड़ना चाहिये। विचार करनेसे जान पड़ेगा कि विषयभोगके सिवा पति-पत्नीके एकान्तवासकी आवश्यकता नहीं होती। रात्रिमें स्त्री और पुरुषको अलग-अलग कमरोंमें सोना चाहिये। दिनमें अच्छे-अच्छे विचारों या कामोंमें लगे रहना चाहिये। ऐसी पुस्तकें पढ़नी चाहिये जिनसे अपने सुविचारोंको उत्तेजना मिले। आदर्श पुरुषोंके जीवन चरित्रोंका मनन और इस बातका निरन्तर चिन्तन कि भोगमें दुःख ही दुःख है, ब्रह्मचर्य पालन करनेवालोंके लिये बहुत ही लाभदायक है। जब-जब विषयकी इच्छा उत्पन्न हो तब-तब ठंढे पानीसे नहा लेना चाहिये। इससे शरीरके अन्दर रहनेवाली महाग्नि दूसरा और अच्छा रूप धारण करके पुरुष और स्त्री दोनोंके लिये उपकारी बन जायगी और उनके सच्चे सुखमें बड़ी वृद्धि होगी। काम कठिन है, परन्तु कठिनाइयोंके जीतनेहीके लिये तो हम पैदा हुए हैं, आरोग्य प्राप्तिकी इच्छा करनेवालोंको ये कठिनाइयाँ जीतनी ही पड़ेंगी।

दूसरा भाग

(कुछ उपचार)

१—हवा

पहले भागमें हम इस बातपर विचार कर चुके हैं कि आरोग्य कैसे प्राप्त हो सकता है, आरोग्य किसपर अवलम्बित है और आरोग्यकी रक्षाके लिये क्या करना जरूरी है। यदि लोग आरोग्य प्राप्तिके सब नियमोंका सदा पालन करें और आरोग्य सुरक्षित रखनेके लिये अखण्ड ब्रह्मचर्यका पालन करते रहें तो आगेके प्रकरणोंकी जरूरत ही न हो, क्योंकि ऐसे लोगोंको शारीरिक और मानसिक व्याधियाँ सता ही नहीं सकतीं। पर ऐसे स्त्री-पुरुष हमें मिलते कहाँ हैं। बिरले ही स्त्री-पुरुष ऐसे होंगे जिन्हें कभी किसी प्रकारकी व्याधि न हुई हो। साधारण मनुष्य तो सदा व्याधियोंसे पीड़ित रहते हैं। ऐसे मनुष्य प्रथम भागमें बताये नियमोंका जितना अधिक पालन करेंगे उतने ही अधिक नीरोग रहेंगे। पर इस विचारसे कि रोग उत्पन्न होनेकी दशामें ऐसे मनुष्य घबड़ाकर डाक्टर और वैद्योंके पास दौड़ते न फिरें, बल्कि खुद ही व्याधि दूर करनेका उपाय कर सकें, आगेके प्रकरण लिखे जाते हैं।

हम दिखा चुके हैं कि आरोग्य रक्षाके लिये पहली आवश्यक वस्तु हवा है। इसी प्रकार हवा रोगोंके नाश करनेके लिये भी बहुत मूल्यवान है। उदाहरणार्थ ऐसे मनुष्यको लीजिये जिसे गठिया हो गई हो, उसे गरम हवाकी भाप दी जाय तो पसीना आ जायगा और जोड़ खुल जायँगे। इस प्रकार भाप देनेको 'टर्किश बाथ' कहते हैं।

जस मनुष्यका शरीर बुखारसे आगके समान जल रहा हो

उसे यदि बिलकुल नंगा करके खुली हवामें सुला दिया जाय तो उसकी गरमीका माप एकदम कम हो जायगा, उसकी बेचैनी जाती रहेगी। शरीर ठंढा हो जानेपर उसे ओढ़ा दिया जाय तो पसीना निकलेगा और बुखार उतर जायगा। पर हम लोग बुखार चढ़नेपर—चाहे बीमार गरमीसे घबड़ाही क्यों न रहा हो कमरेकी खिडकियां और दरवाजे बन्द कर रखते हैं, उसका सिर और नाक खुले नहीं रहने देते, उसे खूब ओढ़ा लपेटकर रखते हैं, यह निरा बहम है। इससे बीमार घबड़ाता है और कमजोर हो जाता है। यदि गरमीसे बुखार आया हो तो ऊपर बताये हवाके उपचारसे नहीं डरना चाहिये। इसका फायदा तुरन्त जान पड़ेगा। इससे नुकसान जरा भी नहीं होगा। हां, इस बातकी संभाल रखनी चाहिये कि बीमार स्वयं खुला रहकर कांपने न लगे। यदि बीमारको सरदी मालूम हो तो समझ लेना चाहिये कि उसे ज्यादा घबराहट नहीं है। बीमार नग्न दशामें बाहर न रह सके तो भी उसे ओढ़ाकर बाहर खुली हवामें रखनेसे कभी नुकसान नहीं है।

जीर्ण-ज्वर (पुराने बुखार) अथवा दूसरी बीमारियोंके लिये वायु परिवर्त्तन (हवा बदलना) एक अक्सीर दवा है। हवा बदलनेका रिवाज उपचारका ही अङ्ग है। कभी-कभी लोग घर भी बदल देते हैं, जिस घरसे बीमारी कभी दूर नहीं होती उसमें भूत प्रेतका वास समझने लगते हैं, यह खाली बहम है, भूत-प्रेतपना हवाकी खराबीमें ही रहा करता है, घर बदलनेसे हवा बदल जाती है, यही बड़ा फायदा है। हमारे शरीरके साथ हवाका ऐसा घना सम्बन्ध है कि उसका जरा भी फेर-फार हमारे ऊपर अच्छा अथवा बुरा परिणाम डाले बिना नहीं रहता। पैसे वाले हवा बदलनेके लिये बाहर दूर जा सकते हैं। गरीब लोग पासके गांवमें जाकर और मजबूरीकी हालतमें दूसरे घरमें जाकर भी फायदा उठा सकते हैं। बीमारको एकसे दूसरी कोठरीमें ले

जानेसे भी कुछ फायदा होता है। घर, कोठरी और गांव आदि के बदलनेसे हमको इस बातका जरूर ख्याल रखना चाहिये कि जहां जाना हो वहांकी हवा बहुत ही बढ़िया हो। नर्म (सर्द) हवामें उत्पन्न हुई बीमारी अधिक नम हवावाले स्थानमें जानेसे दूर नहीं होगी। कभी-कभी हवा तबदील करनेका फल अच्छा नहीं होता, इसका कारण यह होता है कि बिना समझे हवा तबदील की जाती है। कितनी ही बार अच्छी हवामें जानेपर भी लाभ नहीं दिखाई पड़ता क्योंकि अन्य प्रकारकी आवश्यक सावधानी नहीं रखी जाती।

पहले भागके हवाके प्रकरणके साथ इसे मिलाकर पढ़नेसे पाठकोंको समझनेमें बहुत आसानी होगी। उसमें हवाका आरोग्यके साथ सम्बन्ध बतलाया गया है और हवाके विषयमें सामान्य विचार किया गया है। यहाँ हवाका विचार सिर्फ उपचारकी भांति किया गया है।

२—जल-चिकित्सा

हवाका काम अदृश्य रूपसे होता है, इसलिये हम हवाके उपचारोंकी खूबी भलीभाँति नहीं परख सकते; परन्तु पानीका प्रभाव और काम देख सकते हैं। इससे उसकी खूबियाँ तुरन्त जानी जा सकती हैं।

सभी लोग थोडी बहुत भापकी जल-चिकित्सा जानते हैं। बुखारमें बीमारको भाप देते हैं, सिरमें बहुत अधिक दर्द होनेपर प्रायः भापसे दूर किया जाता है। सन्धिवात (गठिया) से जोड़ोंके जकड़ जानेपर बीमारको शीघ्र लाभ पहुँचानेके लिये भाप देकर तुरन्त ठंढे पानीमें नहलानेसे उसे बहुत लाभ होता है। शरीरपर ज्यादा फोड़े-फुन्सी होनेपर मरहम-पट्टीसे काम नहीं चलता, पर भाप देनेसे वे एकदम नरम पड़ जाते हैं।

बहुत थका हुआ मनुष्य अगर भाप ले, गरम पानीसे नहा

तत्काल ठंढे पानीसे नहा ले तो शरीर हल्का हो जायगा, थकावट उतर जायगी। जिसे नींद न आती हो वह भाप लेकर ठण्डे पानीमें नहाये और खुली हवामें लेटे तो तुरन्त नींद आ जा सकती है।

जहाँ भाप काममें लानेको कहा गया है, वहाँ गरम पानी काममें ला सकते हैं। भाप और गरम पानीमें भेद न समझना चाहिये। अगर पेटमें सख्त दर्द होता हो तो गरम पानीसे सेकनेसे तुरन्त आराम होगा। उबलते हुए पानीको बोतल या हाँड़ीमें भरकर और पेटपर मोटा कपड़ा रखकर उसके द्वारा सेकनेका काम कर सकते हैं। कभी-कभी कै (उल्टी) करानेकी जरूरत पड़ती है। अधिक गरम पानी पीनेसे कै हो सकती है। जिन्हें कब्ज रहता हो वे यदि सोते समय वा सवेरे दतुअनके बाद गरम पानी पियें तो दस्त आनेकी बहुत सम्भावना रहती है। सर गार्डन स्प्रिंग जो किसी समय केपके प्रधान थे—बड़े तन्दुरुस्त थे। किसीने पूछा, इसका मुख्य कारण क्या है? बोले 'मैं—सोते समय तथा सबेरे उठकर हर रोज एक गिलास पानी पीता हूँ, इसीसे मेरी तन्दुरुस्ती ऐसी अच्छी रहती है।" कितने ही मनुष्योंको चाय पीनेके बाद दस्त उतरता है वे गलतीसे समझते हैं कि यह चाय पीनेका परिणाम है पर अच्छी तरह विचारनेसे जान पड़ेगा कि चाय तो उल्टा नुकसान करती है, लाभका कारण उसमें गरम पानी ही है।

भाप लेनेके लिये एक विशेष प्रकारके चौकठे भी आते हैं परन्तु उनकी कोई विशेष जरूरत नहीं होती। बेतकी कुर्सीके नीचे स्पिरिट वा मिट्टीके तेलका चूल्हा या जलती लकड़ी या कोयलेकी छोटीसी अँगीठी रखी जाय। अँगीठीपर एक छोटीसी पतीली पानी भरके मुँह ढँककर रख दे। कुर्सीपर एक गुदड़ी या कम्बल इस प्रकार डाल दे कि वह आगेकी तरफ लटकती रहे जिसमें बीमारको अँगीठी या भापकी आँच न लगे। अब

बीमारको कुर्सीपर बिठाकर उसके चारों तरफ कम्बल या चादर लपेट दें। फिर पतीलीपरसे ढक्कन हटा दें। अब बीमारको भाप लगनी शुरू होगी। हमलोगोंमें बीमारका सिर ढकनेकी रीति है परन्तु वैसा करनेकी जरूरत नहीं। शरीरमें जो गरमी पैदा होती है वह मस्तकतक चढ़ती है और उससे मुँहपर पसीना आ जाता है। अगर बीमार उठ-बैठ न सकता हो तो उसे रस्सीके पलंग या लोहेकी चारपाईपर लेटाकर भाप दी जाती है। इसमें कम्बलको इस तरह रखें कि गरमी और भाप बाहर न निकल जाय। भाप देते हुए इस ओर विशेष ध्यान रखें कि बीमार जल न जाय, कहीं उसके कम्बल इत्यादिमें आग न लग जाय। बीमारकी हालत बहुत ही नाजुक हो तो बहुत सोच समझकर भाप दें, भाप देनेमें जैसे लाभ हैं वैसे हानियाँ भी हैं। भाप लेनेके बाद मनुष्य कमजोर जरूर पड़ जाता है। पर यह कमजोरी बहुत दिनोंतक नहीं रहती। हाँ, अगर रोजाना भाप लेनेकी आदत पड़ गयी तो आदमी जरूर कमजोर हो जाता है, इसलिये भापका उपयोग बहुत सावधानीसे करना चाहिये। शरीरके किसी भी भागको भाप दी जा सकती है। किसी मनुष्यका सिर दुखता हो तो सारे शरीरको भाप न दे। छोटे मुँहवाली पतीली या हाँड़ीमें पानी उबालकर उसपर केवल माथा रखे, सिरके ऊपरी भागको कपड़ेसे ढाँककर नाक द्वारा भाप ले। भाप नाकके छेदोंसे सिरमें चढ़ जायगा। नाक बन्द हो तो भाप लेनेसे खुल जायगी। किसी विशेष अङ्गपर सूजन आ जाय तो उसके दूर करनेके लिये उतने अङ्गको भाप देनी चाहिये।

गरम पानी और भापका फायदा साधारणतः सब लोग समझते हैं, पर ठण्ढे पानीके लाभ समझनेवाले बहुत कम दिखाई पड़ते हैं। यह निर्विवाद है कि ठण्ढे पानीकासा असर गरम पानीमें नहीं है ठण्ढे पानीमें ताकत देनेका गुण अधिक होता है। कमजोरसे कमजोर आदमीपर भी ठण्ढे पानीका उपचार किया जा

सकता है। तापज्वर, शीतलाकी बीमारी और चर्म रोगों में ठण्ढे पानीमें भिगोई हुई चादर लपेटनेका इलाज अक्सीर है। इसका असर बहुत विचित्र होता है। हर आदमी बेखटके इसकी आजमाइश कर सकता है। मनुष्यको यदि उन्माद हो गया हो, सन्निपातने घर दबाया हो तो बर्फके पानीमें भिगोया हुआ कपड़ा सिरपर रखनेसे शान्ति मिलेगी। जिसे दस्त न होता हो वह बर्फके पानीमे भींगा हुआ कपड़ा अपने पेटपर रखे तो सम्भवतः दस्त आ जायगा। वीर्यपात हो जाता हो तो पेड़ूपर ठण्ढे पानीमें भिगोया हुआ कपड़ा बाँधकर सोनेसे अवश्य लाभ पहुँचेगा। किसी जगह खून बह रहा हो तो बर्फके पानीसे भींगी पट्टी बाँधनेसे खून बन्द हो जायगा। नकसीर फूटनेपर माथेपर लगातार ठण्ढा पानी डालते रहनेसे तुरन्त फायदा होता है। नाककी बीमारी जुकाम और सिरकी पीड़ामें नाकसे दोनों समय पानी चढ़ाना बहुत भी लाभदायक है। नाकका एक छेद बन्दकर दूसरेसे पानी चढ़ाया और पहलेसे निकाला जा सकता है। दोनों छेदोंसे पानी चढ़ाकर मुँहसे भी निकाला जा सकता है। नाक साफ हो तो चढ़ाये हुए पानीके पेटमें जानेसे भी कोई डर नहीं। पानी चढ़ाकर नाक साफ रखनेकी आदत बहुत ही अच्छी है। नाकसे पानी न चढ़ा सकनेवाले पिचकारीसे चढ़ा सकते हैं, दो-चार बार प्रयत्न करनेसे पानी चढ़ाना आ जाता है। हर आदमीको यह क्रिया मालूम होनी चाहिये, क्योंकि सिरकी बीमारियाँ ऐसे सहज उपायसे प्रायः तुरन्त ही बन्द हो सकती हैं। नाकसे बुरी बास आती हो तब भा यह इलाज कामका है। कितनोंहीके नाकमें पपड़ी पड़ती है, इसके लिये पानी चढ़ाना रामबाण है।

बहुत लाग गुदा (मलद्वार) के रास्तेसे पेटमे पानी चढ़ाते आगा-पीछा करते हैं। कितने ही कहते हैं, इससे शरीर निर्बल हो जाता है, पर यह निरा भ्रम है। तुरन्त दस्त लानेके लिये गुदाके रास्तेसे पानीकी पिचकारी लेनेकी अपेक्षा दूसरा उत्तम

इलाज नहीं है, बहुतेरी बीमारियोंमें जब दूसरा इलाज काम नहीं करता तब यही करता है। इस इलाजसे मल बिलकुल साफ हो जाता है और शरीरमे नया जहर नहीं जमता। जिन्हें बातरोग हो, वादी हो, मेदेकी खराबीसे किसी भी प्रकारका दर्द हो उन्हें गुदा द्वारा दो पाउण्ड (एक सेर) पानीकी पिचकारी लेकर देखना चाहिये। तुरन्त दस्त हो जायगा। इस विषयपर एक मनुष्यने एक पुस्तक लिखी है। उसने बहुतेरी दवाइयाँ कीं किन्तु बदहजमीके चङ्गुलसे छुटकारा न पाया। उसका शरीर निर्बल होकर पीला पड़ गया था। पिचकारी लेना शुरू करनेके बाद ही भूख खुली और थोड़े ही दिनोंमें तबीयत बिलकुल अच्छी हो गयी। पीलिया जिस रोगमें बदन पीला पड़ जाता है। जैसी बीमारियाँ भी पिचकारी द्वारा तुरन्त नष्ट की जा सकती हैं। यदि बार-बार पिचकारी लेनेकी जरूरत पड़े तो ठंढे पानीकी लेनी चाहिये। बार-बार गरम पानीकी पिचकारी लेनेसे कमजोरी आ जानेकी सम्भावना रहती है। पर यह दोष पिचकारीका नहीं है।

जर्मन डाक्टर कुनेने अनेक प्रयोगोंसे यह बात निश्चित की है कि पानीका इलाज सर्वोत्तम है। इस विषयपर उसकी लिखी हुई पुस्तक ऐसी सर्वप्रिय हुई कि प्रायः सभी भाषाओंमे उसके अनुवाद हो चुके हैं! हिन्दुस्तानी भाषाओंमे भी उसके अनुवाद हुए हैं। *कूनेके सिद्धान्तसे सब रोगोंकी जड़ मेदा है। मेदेमें गर्मी होनेसे शरीरके बाहरी भागमें फोड़े फुंसी या दूसरी बीमारियाँ फूट निकलती है, या ताप बाहर निकल कर सारे शरीरको तपाने लगता है। कूनेके पूर्व लेखकोंने भी पानीके उपचारपर

---

* हिन्दीमे कूनेकी सब पुस्तकोंका अनुवाद हो गया है। १—जल चिकित्सा ३ भाग ४॥), २—आकृति निदान २) ३—मैं नीरोग हूँ या रोगी ।=, ४—बच्चोंकी रक्षा ।=), ये चारों पुस्तकें हिन्दी पुस्तक एजेन्सी २०३, हरिसन रोड कलकत्तासे मिलती हैं।

अपनी सम्मति दी है, पानीके उपचार नामकी एक पुस्तक कूनेकी पुस्तकसे बहुत पहले लिखी जा चुकी थी। पर कूनेके पहले किसीने भी बीमारियोंकी एकतापर इतना ज़ोर नहीं दिया, किसीने यह नहीं बतलाया था कि सब रोगोंकी मूल उत्पत्ति मेदेसे है। हमें यह मान लेनेकी जरूरत नहीं कि कूनेका सिद्धान्त सर्वांशमें सत्य है इस विचारसे कोई मतलब भी नहीं। पर देखनेसे बहुतेरी बीमारियोंके विषयमें कूनेके विचार और उपचार ठीक उतरते हैं। यह अनुभव सिद्ध है। डरबनके मजिस्ट्रेट मि० ट्रीटन धनुर्वातसे बिलकुल अपङ्ग हो गये थे, बहुतेरे डाक्टरोंका इलाज किया पर सब निष्फल। किसीने कूनेके यहाँ जानेकी सलाह दी। वहाँ जाकर वे अच्छे हो आये। बहुत दिनोंतक डरबनमें सुखसे रहे। यह हमेशा लोगोंको कूनेके उपचारों द्वारा लाभ उठानेकी सलाह दिया करते थे। कूनेके उपचार करनेवाली संस्था भी नेटालमें स्वीटवाटर्स नामक स्टेशनके पास है। जल-चिकित्सा प्रचारके ऐसे बहुतेरे उदाहरण विद्यमान है।

डा० कूनेने लिखा है कि मेदेकी गर्मी ठण्ढकके पहुँचानेसे मिटती है। इसके लिये उसने इस प्रकार ठण्ढे जलसे स्नान करना बताया है जिससे मेदेके आसपासके भागोंको ठण्ढक मिल सके। सरलतापूर्वक इस स्नानकी सुविधाके लिये उसने एक विशेष प्रकारका टीनका टब बनाया है। पर हम इसके बिना भी काम चला सकते हैं। पुरुष और स्त्रियोंके भिन्न-भिन्न कदके अनुसार ३६ इञ्चके या उससे छोटे-बड़े टीनके टब कुछ लम्बाई लिये हुए गोल बरतन बाजारोंमे बिकते है. ये कूने बाथके लिये अच्छे हैं। टबका तीन चौथाई भाग ठण्ढे जलसे भरकर उसमे रोगीको इस तरह बिठाना चाहिये कि उसके पैर और धड़ पानीके बाहर रहें। नाभीसे लेकर जंघोतकका भाग ही पानीके अन्दर रहे। अच्छा हो कि पैर किसी पीढ़े या पाटेके ऊपर रख दिये जायँ। बीमारको पानीमे बिलकुल नङ्गे होकर बैठना चाहिये,

ठण्ढक मालूम हो तो पैर और धड़ कम्बलसे ढक दिये जायँ। ऐसी दशामें बीमारको कुरता, सलूका इत्यादि भी पहिनाया जा सकता है, पर ये चीजें पानीके बाहर रहनी चाहिये। यह स्नान ऐसी कोठरीमें करना चाहिये जहाँ उजेला, हवा और धूप आती हो। पानीमें बैठकर रोगीको एक छोटे खुरदरे रूमालसे पानीके भीतर अपना पेट धीरे-धीरे स्वयं मलना चाहिये या दूसरेसे मलवाना चाहिये। यह स्नान ५ से ३० मिनट या उससे भी अधिक देरतक किया जा सकता है। प्रायः देखा गया है कि इस स्नानका असर तुरन्त होता है। वादीके बीमारको तो तुरन्त वायु सरने लगता है या डकारें आने लगती हैं। बुखारकी दशामें तो स्नानके पाँच मिनट बाद ही थर्मामीटरका पारा एक दो या अधिक डिग्री नीचे जरूर उतर आता है। दस्त साफ होने लगता है। थकावट मिट जाती है। बिलकुल नींद नहीं आनेवालोंके मस्तिष्ककी गर्मी शान्त होकर नींद आ जाती है। ज्यादा नींदवाले जगने लगते हैं और मनमें फुर्तीलापन आ जाता है। सरसरी तौरपर देखनेसे स्नानसे परस्पर विरोधी परिणाम उदाहरणार्थ, नींद आना और नींद दूर हो जाना, निकल सकते हैं पर ऐसा नहीं है। इसका विचार ऊपर हो चुका है। फिर भी यहाँ इतना बता देना आवश्यक है कि नींद बहुत आना या बिलकुल न आना ये दोनो बातें एक ही कारणके भिन्न-भिन्न परिणाम हैं। इनमें केवल देखने भरका विरोध है। अतिसार और बद्धकोष्ठ दोनों बदहजमीके नतीजे है। किसीको अतिसार हो जाता है और किसीको बद्धकोष्ठ। इन दोनोंपर ही कूनेके स्नानोका बहुत ही अच्छा असर होता है। बहुत पुराना (अर्श बवासीर भी इस स्नान और इसके साथ ही खुराक इत्यादिके उपचारसे दूर हो सकता है। बहुत थूकनेकी आदतवालोका तुरन्त स्नान शुरू कर देना चाहिये, शुरू करते ही फायदा जान पड़ेगा। इस स्नानसे निर्बल मनुष्य भी बलवान हो जाते हैं। बहुत लोगोका सन्धिवात (गठिया)

तक अच्छा हो गया है। रक्तस्रावके लिये यह स्नान बहुत ही उपयोगी है। इससे रक्तविकार भी दूर हो जाता है। माथा दुखनेपर यदि कोई मनुष्य यह स्नान करे तो उसका दर्द तुरन्त हलका पड़ जायगा। कूने तो इसे नासूर सरीखे भयङ्कर रोगोंमें भी अमूल्य गिनता है। गर्भिणी स्त्री यह स्नान करती रहे तो उसे प्रसव कालमें बहुत ही कम कष्ट हो। बालक, जवान, बूढ़े, स्त्री और पुरुष सभी यह स्नान कर सकते हैं।

इसके सिवा स्नानकी एक रीति और भी है जो कुछ बीमारियोंके लिये अक्सीर है। इसे 'वेट-शीट-पेक' अर्थात् 'भीगी चादरोंका बन्धन' कहते हैं।

लेनेकी रीति—खुली हवामें एक लम्बी मेज वा तख्तेपर उपचार या हवाके अनुसार कम ज्यादा कम्बल लटकते हुए बिछा दें। इनपर दो मोटी और साफ चादर ठण्ढे पानीमें पूरी तरह भिगोकर लटकती हुई बिछावें, माथेकी ओर कम्बलोंके नीचे एक तकिया रखें। अब बीमारको नङ्गा करें, वह चाहे तो एक छोटा रूमाल या लँगोटी कमरमें पहन सकता है। ऊपर बताई रीति से तैयार की हुई चादरोंपर बीमारको चित लिटाकर चादर और कम्बलोंको एक-एक करके दोनों ओरसे उसके शरीरपर लपेट दें। धूप हो तो बीमारके मुह और माथेपर भीगा रूमाल लपेट दिया जाय। नाक सदा खुली रहे। बीमारको जरा देर कँपकँपी लगेगी फिर आराम मालूम होगा और शरीरको भली मालूम होनेवाली गरमी लगेगी। इस स्थितिमें बीमार पाँच मिनटसे एक घण्टे या इससे भी अधिक देरतक रह सकता है। अन्तमें गरमीसे पसीना बह निकलता है। प्रायः देखा गया है कि ऐसी स्थितिमें बीमार सो जाता है। बीमारको चादरसे बाहर निकालनेपर पानीसे नहलाना चाहिये। चमड़ेकी अनेक बीमारियोंकी यह उत्तम दवा है। खुजली, दाद, सेहुँवा, अम्हौरी, चेचक, साधारण फोड़े और बुखार आदिपर चादरका बन्धन

बहुत ही गुण करता है। चेचककी बीमारी कितनी ही भयङ्कर क्यों न हो इस उपचारसे बहुत करके नष्ट हो सकती है। शरीरपर यदि चट्टे पड गये हों तो एक या दो बार इस बाथ (स्नान) को लेनेसे मिट जाते हैं। इस बाथका खुद लेना या किसी दूसरेको देना बहुत आसानीसे सीखा जा सकता है। स्वयं अनुभव करके इसकी उपयोगिता जानी जा सकती है। इस बाथसे शरीरके चमड़ेका बहुतसा मैल चादरमें लिपट जाता है। इसलिए एक बार काममें लाई हुई चादर खौलते हुए पानी में खूब धोये बिना उसी बीमार या दूसरे किसीके काममें न लानी चाहिये।

अन्तमें ऊपर लिखे हुए पानीके उपचारोंके विषयमें इतना याद दिलाना आवश्यक है कि जो मनुष्य पानी, हवा, खुराक और कसरत आदिकी उपेक्षा करके केवल बाथहीका सहारा लेगा उसे उसका लाभ या तो बहुत कम या बिलकुल ही नहीं मालूम होगा। मान लीजिये कि एक सन्धिवातका रोगी कूने बाथ या चादर-बन्धनका उपचार शुरू करे, पर अभक्ष्य भक्षण करे, अस्वच्छ हवामें रहे, गन्दगीमें पड़ा सड़े और कसरत न करे, तो उसे अकेले बाथसे आरोग्य कैसे प्राप्त हो सकता है? तन्दुरुस्तीके दूसरे सब नियम साथ पालनेसे ही पानीका उपचार मददगार हो सकता है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि अगर तन्दुरुस्तीके दूसरे नियमोंका पालन पूरी तरह किया जाय तो पानीके उपचारसे बीमार बड़ी जल्दी आराम हो सकता है।

३—मिट्टीका उपचार

जलोपचारके लाभ बतलाये गये पर कितने ही रोगोंमें मिट्टीका उपचार इससे भी अधिक चमत्कारिक देखा गया है। हमारे शरीरका आधा भाग मिट्टीसे बना है, इसलिये उसपर मिट्टीका असर होना कोई नयी बात नहीं। बहुत लोग मिट्टीको पवित्र मानते हैं। दुर्गन्ध मिटानेको जमीनपर मिट्टीसे लीपते हैं,

सड़ी चीजोंपर मिट्टी डालते हैं, अपवित्र हाथोंको मिट्टीसे धोकर पवित्र करते हैं, गुदा भाग भी मिट्टी लगाकर पवित्र किया जाता है। योगी लोग शरीरपर मिट्टी लगाते हैं। यहाँके देशी लोग फेड़े-फुन्सियोंमें मिट्टीका उपयोग करते हैं। हम पानी साफ करनेके लिये बालू या मिट्टीमेंसे छानते हैं। मुर्दे जमीनके अन्दर गाड़ देनेसे हवामें गन्दगी नहीं पैदा कर सकते। मिट्टीकी इस प्रत्यक्ष महिमासे हम अनुमान कर सकते हैं कि उसमें कितने ही विशेष अच्छे गुण होना सम्भव है।

जैसे कूनेने पानीपर खूब विचारकर कितनी ही उपयोगी बातें लिखी हैं वैसे ही जुस्ट नामक एक जर्मनने मिट्टीके सम्बन्धमें अनेक लाभदायक बाते बतायी हैं। यहाँतक कहा है कि मिट्टीके उपचारसे असाध्य रोग भी मिट सकते हैं। उसका कहना है कि एक बार मेरे पास गाँवमें किसी आदमीको साँपने काट खाया, बहुतोंने मरा समझ लिया। पर वहाँ किसी आदमीने मुझसे सलाह लेनेकी बात कही। मैंने उसे मिट्टीमें गड़वा दिया, थोड़ी देर बाद उसे होश आ गया। यह अनहोनी बात नहीं है और कोई कारण नहीं कि जुस्ट झूठ लिखता। यह तो साफ दिखलाई पड़ता है कि मिट्टी में गाड़ देनेसे बहुत गरमी निकलती है। हमारे पास यह जाननेके साधन नहीं हैं कि मिट्टीमें मौजूद किंतु अदृश्य तंतुओंने शरीरपर क्या काम किया, पर यह निर्विवाद है कि मिट्टी में जहर इत्यादि चूस लेनेकी शक्ति है। इसपर भी जुस्टने लिखा है कि इससे मेरा यह मतलब नहीं कि सभी साँपके काटे मिट्टीके इलाजसे जी उठते हैं, पर ऐसे समयमें मिट्टीका उपचार करना चाहिये। बर्रे और बिच्छूके डंकपर मिट्टीके उपयोगकी मैंने खुद भी आजमाइश की है और उससे तुरन्त आराम मालूम हुआ है। मिट्टीको ठंढे पानीमें सानकर उसकी गाढ़ पुलटिस सी बना और कटे हुए स्थानपर रखकर कपड़ेसे बाँध दें।

नीचेके उदाहरणोंमें मैंने इस उपचारको खूब आजमाया है।

पेटमें मरोड़ होनेवालेके पेड़ूपर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे दो-तीन दिनमें मरोड़ बन्द हो गई है। सिरमें दर्द होनेपर मिट्टीकी पुलटिस रखनेसे तुरन्त ही आराम मालूम हुआ है। आँख उठनेपर भी यह पुलटिस बाँधनेसे लाभ देखा गया है। चोटमें मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे सूजन और दर्द दोनों दूर हो जाते हैं। बहुत दिनोंतक मेरी यह दशा थी कि मैं फ्रूटसाल्ट इत्यादि लिये बिना नीरोग नहीं रहता था। १९०४ ई० में मुझे मिट्टीकी उपयोगिता मालूम हुई, तबसे फ्रूटसाल्ट इत्यादि चीजें छूट गयीं। फिर किसी दिन इनको लेनेकी जरूरत नहीं पड़ी। कोष्ठबद्धतामें पेड़ूपर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे बड़ा भारी असर दिखलाई पड़ता है। पेटका दर्द मिट्टी बाँधनेसे नरम पड़ जाता है। अतिसार भी मिट्टी बाँधनेसे जाता रहता है। तेज बुखारमें माथे और पेड़ूपर मिट्टी बाँधनेसे एक-दो घटे बाद बुखार बहुत कम हो जाता है। फोड़े-फुन्सी, दाद और खुजली इत्यादिपर मिट्टीकी पुलटिस प्रायः बहुत अच्छा असर करती है। हाँ, ऐसे फोड़ोंपर मिट्टीकी उपयोगिता कम हो जाती है जो पसा करते हैं। जलेपर मिट्टी बाँधनेसे जलन कम हो जाती है और छाला नहीं पड़ता। बवासीरके लिये मिट्टी बहुत लाभदायक है। पाला लग जाने से प्रायः हाथ-पैर लाल होकर सूज आते हैं इसपर मिट्टीकी पुलटिस अपना असर किये बिना नहीं रहती। खरजवा (खुजली विशेष) पर मिट्टी गुणकारी देखी गयी है। दुखते हुए जोड़ोंपर मिट्टी लगानेसे तुरन्त फायदा होता है।

मिट्टीके बहुतसे प्रयोग करते हुए मुझे मालूम हुआ है कि घरेलू इलाजके लिए मिट्टी एक अमूल्य वस्तु है।

इस प्रकारकी मिट्टी एक समान गुणवाली नहीं होती। सुर्ख मिट्टी अधिक असर करनेवाली पायी गई है। मिट्टी सदा साफ जगहसे खोदकर निकाले। जिस मिट्टीमें गोबर इत्यादिका मैल हो उसे प्रयोगमें न लाना चाहिये। मिट्टी बहुत चिकनी न हो।

चिकनी और बालू मिल हुई मिट्टी अच्छी समझी जाती है। उसमें किसी प्रकारका कूड़ा-कचरा न हो। मिट्टीको बारीक चलनीसे चालकर काममें लाना अधिक उपयोगी है। मिट्टी सदा ठंढे पानीमें भिगोवें। गूथे हुए आटेके समान कड़ी मिट्टी रखनी चाहिये। साफ, बिना कलपके झँझरे कपड़ेमें बाँधकर पुलटिसकी तरह जरूरी जगहपर रखें। शरीरपर सूखनेके पहले ही मिट्टी को खोल लें। साधारणत. एक दफेकी पुलटिस दोसे तीन घण्टे तक चल सकती है। काममे लाई हुई मिट्टी दोबारा काममें न लावें। पुलटिसमें बँधा हुआ कपड़ा धोकर दो बार बाँधनेके काममें आ सकता है। लेकिन उसमें पीब इत्यादि न लगी हो। पेड़ूपर पुलटिस बाँधनी हो तो पहले पुलटिसपर एक गरम कपड़ा रखें तब उसपर पट्टी चढ़ावें। हर आदमीको एक डब्बेमें मिट्टी भर रखनी चाहिये। जिसमे मौकेपर ढूँढ़ने न जाना पड़े। बिच्छू इत्यादिके डंकपर जितनी ही जल्दी मिट्टी लगाई जाती है उतना ही अधिक फायदा होता है।

४—बुखार और उसके इलाज

मुख्य उपचारोंके बाद अब कुछ विशेष बीमारियोंपर विचार करते हैं। बीमारियोंके साथ ही उनके उपचार भी आ जायँगे; उनके लिये अलग प्रकरणकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती।

हम लोग शरीरकी हर तरहकी हरारतको बुखार कहते हैं। अंगरेजी डाक्टरोंने बुखारके बहुतसे विभाग करके उनपर अलग-अलग पुस्तकें लिखी हैं और उन विभागोंका खूब विस्तार किया है। हम लोगोंके लौकिक हिसाब तथा इस प्रकरणमे बताये अनुसार अधिकतर बुखारोंमें एक ही इलाज काम कर सकता है। साधारण बुखारसे लेकर प्लेगतकके बुखारमें मुझे एक ही इलाजका अनुभव हुआ है और उसका परिणाम ठीक निकला है। १९०४ ई० में अफ्रीकामें हम लोगोंमे महामारी फूट निकली।

उसमें २३ आदमी बीमार हुए। २४ घण्टेके अन्दर २१ आदमी मर गये। दो प्लेगके अस्पतालमें पहुँचा दिये गये। इन दोनोंमेंसे एक ही अन्ततक जीता रहा और यह वह आदमी था जो अकेला मिट्टीकी पुलटिसका उपयोग कर सका था। इससे यह नहीं कहा जा सकता कि उस रोगीको मिट्टी हीसे लाभ पहुँचा; परन्तु इतना तो कहा जा सकता है कि उस मिट्टीके कारण उसे और किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुँची। इन दोनों बीमारोंके फेफड़ों-में सूजन हो जानेसे बुखार आया था। दोनों बेहोशीमें पड़े हुए थे। जिसकी छातीपर मिट्टीकी पुलटिस बाँधी गयी थी उसकी बीमारी ऐसी भयंकर थी कि उसके मुँहसे कफकी भाँति खूनतक गिर रहा था। डाक्टरसे मुझे मालूम हुआ कि इसे पहले बहुत कम खुराक दी जाती थी और सो भी दूध की।

बुखारकी उत्पत्ति अधिकतर मेदेकी खराबीसे होती है, इस-लिये पहला उपाय रोगीको बिलकुल उपवास कराना है। कुछ कमजोर या बुखारवाला मनुष्य बिना खाये बिलकुल कमजोर हो जायगा यह निरा भ्रम है। जितनी खूराकका पचनेके बाद खून बन सकता है उतनी ही कामकी है और बाकी पेटमें शीशेके डलेके समान पड़ी रहती है। बुखारवाले मनुष्यका मेदा बहुत कमजोर हो जाता है, उसकी जीभ काली या सुफेद रहती है; ओंठ सूखे रहते हैं। इस हालतमें वह मनुष्य क्या पचा सकता है? उसे भोजन करनेको दिया जाय तो बुखार अवश्य बढ़ेगा। खाना एक दम बन्द कर देनेसे मेदेको अपना काम करनेका मौका मिलता है। इसलिये बीमारको एक, दो या अधिक दिनतक उपवास करना चाहिये। उपवासके दिनोंमें भी कूने बाथ देना चाहिये। कम से-कम दो बाथ तो रोज ही लेने चाहिये। रोगी बाथ ले सकने लायक न हो तो पेड़ूपर मिट्टीकी पुलटिस बाँधे। माथा दुखता हो अथवा अधिक गरम हो गया हो तो माथेपर मिट्टी बाँधनी चाहिये। जहाँतक हो बीमार खुली हवामें रखा जाय;

किन्तु उसका बदन ढका रहे। भोजन आरम्भ करानेके समय नारंगीका गरम या ठण्ढा पानी दिया जाय। नारंगीको दबाकर रस निकाल लें और उसमें आवश्यकतानुसार ठण्ढा या उबलता पानी मिला दें। यथासम्भव उसमें शक्कर न डालें। नारंगीके इस पानीका असर बहुत अच्छा होता है। यदि बीमारके दाँत आम न जाते हों और वह ले सके तो ऊपरकी रीतिसे बनाया हुआ नीबूका ही पानी वह ले। इसके बाद उसे आधा या एक केला, एक चम्मच जैतूनके तेल तथा एक या आधा चम्मच नीबूके पानीमें खूब मलकर दें। प्यास लगनेपर उबाला हुआ ठण्ढा पानी या नीबूका पानी दें। बिना उबाला पानी कभी न दें। साफ पानी प्राप्त करनेकी तरकीब पहले बतायी जा चुकी है, वहांसे देख लें। बीमारको कपड़े बहुत कम पहिनावे और हमेशा बदलते रहें। ओढ़नेवाला कपड़ा यदि काफी हो तो और कपड़ोंकी जरूरत ही नहीं रहती। ऐसे उपचारोंसे 'टाई फाइड' जैसे भयङ्कर बुखारके रोगी भी बिलकुल अच्छे होकर अब खूब तन्दुरुस्त हैं। कुनैन आदि दवाइयोंसे भी मनुष्य अच्छे हो जाते हैं। किन्तु उन्हें एक रोगसे छूटकर दूसरेके पंजेमें फँसना पड़ता है। लोग कहते हैं कि कुनैनके प्रयोगसे 'मलेरिया' फीवरवाले रोगी तो जरूर ही अच्छे हो जाते हैं, परन्तु मेरा ख्याल है कि उन्हें 'मलेरिया' शायद ही छोड़ता हो। लेकिन ऊपर बताई हुई प्राकृतिक दवा लेनेवालोंको मैंने मलेरिया रोगसे भी बिलकुल आराम होते देखा है।

बहुत लोग बुखारमें दूध पीकर रहते हैं, पर मेरा अनुभव है कि बुखारके शुरूमें दूध देना हानिकारक है। उसका पचना कठिन हो जाता है। यदि दूध देना हो तो गेहूँकी काफीके साथ दूधमें थोड़ासा चावलका आटा और पानी डाल पकाकर देना किसी कदर अच्छा है। परन्तु सख्त बुखार या विषम-ज्वरमें इस प्रकारसे भी दूध नहीं दिया जा सकता। ऐसी दशामें नीबूका पानी बहुत ही चमत्कारिक गुण दिखाता है। जब बीमारकी

जीभ साफ हो जाय तब केलेकी खुराक आरम्भ करनी चाहिये। बीमारको दस्त न हो तो रेचक दवा देनेके बदले थोड़ा सुहागा डालकर गरम पानीकी पिचकारी देनेसे पेट साफ हो जायगा और तब 'ओलिव आयल' वाली खुराक उसके पेटको साफकर दिया करेगी।

५—कब्ज, संग्रहणी, पेचिश, बवासीर

इस प्रकरणमें एक ही साथ चार रोगोंका विचार है, साधारणतः यह आश्चर्यजनक मालूम होगा। पर इन विचारोंका परस्पर बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है, और हमारा बिना औषधिका उपचार चारोंके लिये प्रायः एक ही है मेदेपर बहुत बोझा पड़नेसे कितने ही लोगोंको उनके शरीरके गठनके अनुसार कब्ज हो जाता है अर्थात् दस्त या तो नियमानुसार नहीं होता या खुलकर नहीं होता, दस्त उतरनेके लिये उन्हें कॉखना पड़ता है। यह बात यदि बहुत दिनों तक बनी रही तो खून गिरने लगता है। इससे कभी-कभी काँच निकलने लगती है। अथवा अर्श (बवासीर) के मसे निकल आते हैं। किसीको मेदेपर अधिक बोझ पड़नेसे दस्त आने लग जाते हैं। इनका सिलसिला बहुत दिनोतक जारी रहता है। बार-बार पाखाने जानेपर भी हाजत बनी ही रहती है, दस्त बहुत थोड़ा होता है, इस दशाका संग्रहणी कहते हैं। कितनोंको पेचिश हो जाती है, तब ऑव पड़ने लगता है और पेटमें पीड़ा रहती है।

इसमेंसे हर रोगमें भूख कम लगती है, रोगीका शरीर फीका पड़ जाता है, ताकत नहीं रह जाती और साँसमें बदबू रहती है जीभ बिगड़ी रहती है। कितनोंका माथा दुखता है और कितनोंको दूसरी बीमारियां घेर लेती हैं। कब्ज ऐसी फैली हुई बीमारी है कि उसके लिये सैकड़ों दवाइयाँ और फंकियाँ बनी हैं। 'मधर्स-सिगल-शिरप' फ्रूट साल्ट इत्यादि दवाओंका मुख्य काम ही

कब्जियत मिटाना है और कब्ज मिटानेकी धुनमें हजारों मनुष्य ऐसी दवाइयोके पीछे हैरान होते हैं। साधारण वैद्य और डाक्टर तुरन्त ही कहेंगे कि कब्ज इत्यादि बीमारियोंकी जड़ बदहजमी है और वे यह भी कहेंगे कि यदि बदहजमीका कारण दूर कर दिया जाय तो ये बीमारियाँ मिट जायँ। इनमें जो ईमानदार हैं वे साफ कहते हैं कि हमारे रोगी अपनी बुरी आदतें नहीं छोड़ना चाहते और रोग मिटाना चाहते हैं इसीसे हमें फंकी, चूर्ण काढ़े देने पड़ते हैं। आजकलके विज्ञापनबाज तो यहाँतक कह देते हैं कि हमारी दवामें न परहेज करनेकी जरूरत है और न आदत बदलनेकी, केवल औषधि सेवनमात्रसे रोग दूर हो जायगा। इस प्रकरणके पढ़नेवाले समझ गये होंगे कि ये विज्ञापन सरासर दगाबाजीके हैं। जुलाब इत्यादिका असर हमेशा बुरा होता है। हलकेसे हलका जुलाब भी कब्जको मिटाकर शरीरमें दूसरा जहर पैदा करता है। जुलाब लेकर भी यदि मनुष्य अपनी अगली बुरी आदत छोड़ दे और इस प्रकार चले कि फिर उसे जुलाब न लेना पड़े तो सम्भव है जुलाबसे कुछ फायदा उठा सके। पर उसने अपनी आदत जारी रखी तो चाहे जुलाबसे कब्ज संग्रहणी-आदि बीमारियाँ उसे न भी हों किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उसे कोई दूसरी नई बीमारी जरूर हो जायगी।

अब हमें ऊपरकी बीमारियोंके उपायपर विचार करना चाहिये। पहला उपाय तो यह है कि इन बीमारियोंसे पीड़ित मनुष्य अपनी खुराक कम कर दे, बहुत भारी खुराक—बहुत घी, शक्कर और रबड़ी मलाई आदिसे सदा बचे। यदि उसको बीड़ी शराब, भाँग इत्यादिका व्यसन हो तो उसे छोड़ ही देना चाहिये। मैदेकी रोटी खानेकी आदत हो तो उसे भी छोड़ दे। चाय, काफी और कोकोसे परहेज करे। भोजनमें ताजे फलोंका उपयोग मुख्यरूपसे करे और उसके साथ शुद्ध 'ओलिव आयल' जैतूनके तेल—का भी व्यवहार करे।

इलाज शुरू करने से पहले ३६ घण्टेतक उपवास करे। इस बीचमें तथा इसके बाद सोते समय पेड़ूपर मिट्टीकी पुलटिस बांधे और दिनमें एकसे लेकर दो दफे तक कूने बाथ ले। रोज कम-से-कम २ घण्टे जरूर चले। जो लोग ऐसा करेंगे उन्हें निस्सन्देह लाभ जान पड़ेगा। इस इलाजसे अतिसार, कड़ा कब्ज, परेशान करनेवाली पेचिश और बहुत पुराने बवासीरको नष्ट होते हुए मैंने स्वयं देखा है। बवासीरके विषयमें इतना ही कह देना चाहिये कि उसके मसे उपरोक्त इलाजसे नहीं मिटते परन्तु बवासीर बिलकुल कष्ट नहीं देता और मनुष्यको मसोंके रहनेतककी खबर नहीं रहती। पेचिश मरोड़में यह बात याद रखनी चाहिये, कि जबतक खून या आँव पड़ते हो तबतक खुराक बिलकुल नहीं लेनी चाहिये और जब कुछ लेनेकी जरूरत मालूम हो तो गरम पानीमें नारङ्गीका छेना हुआ रस पीना चाहिये। ऐसा करनेसे कठिन-से-कठिन पेचिश कम-से-कम समयमें दूर हो जायगी और बीमारको कष्ट नहीं भोगना पड़ेगा। मरोड़के समय यदि बहुत सख्त तकलीफ होती हो तो एक बोतलमें खूब गरम पानी डालकर उससे या खूब गरम ईंटसे पेट सेंकनेसे वह दूर हो जायगी। बीमारको इन रोगोंमें भी सदाकी भांति खुली हवाकी जरूरत है। कब्जमें नीचे लिखे मेवे खास तौरपर गुणकारी हैं – अञ्जीर, फ्रेंच प्लम्स (बेर) बड़ा मुनक्का, नारङ्गी, केला, किशमिश, (हरीदाख)। इसका यह मतलब नहीं कि भूख न होनेपर भी ये मेवे खाने ही चाहिये। मरोड हो रही हो अथवा मुँहका स्वाद खराब हो तो ये मेवे भी खानेसे हानि ही होगी। ऊपरके वाक्यका यही मतलब है कि जिस समय खानेकी आवश्यकता हो उस समय ऊपरके मेव कब्ज दूर करनेके लिये बहुत गुणकारी हैं।

६—छूतके रोग—शीतला (चेचक)

बुखार इत्यादि कितनी ही बीमारियोंके विषयमे हम थोड़ा-

थोड़ा विचार कर चुके हैं। सब बीमारियोंके विषयमें सूक्ष्म विचार करना हमारा उद्देश्य नहीं है। इसके सिवा सब रोगोंके उत्पन्न होनेका कारण अधिकांशमें एक ही समझा जाता है और सब रोगोंकी दवा भी अधिकांशमें एक ही ख्याल की जाती है। तब हर रोगका अलग-अलग विचार करना आवश्यक भी नहीं मालूम होता। हम शीतला तथा अन्य छूतके रोगोंकी उत्पत्तिका एक ही कारण समझते हैं, इसलिये उनका विचार अलग करनेकी जरूरत नहीं जान पड़ती। इसलिये एक ही प्रकरणमें शीतला तथा अन्य छूतके रोगोंका विचार करना अनुचित न होगा।

शीतलाकी बीमारीसे हम बहुत डरते हैं। लोगोंमें शीतलाके सम्बन्धमें सैकड़ों भ्रमपूर्ण विचार फैल रहे हैं। हिन्दुस्तानमें तो शीतला एक खास देवी ही मान ली गयी हैं और उसके लिये असंख्य मनुष्य मन्नत मानते हैं और चढ़ावा होता है। शीतला भी और बीमारियोंकी भाँति खून बिगड़नेसे ही होती है, खून मैदेकी हरारतसे बिगड़ना शुरू होता है। शरीर अपने अन्दर भरे जहरको शीतलाके साथ बाहर निकालता है। यह विचार ठीक हो तो शीतलासे डरनेकी कोई वजह नहीं। यदि शीतलाकी बीमारी छूतसे ही लगती होती तो शीतलाकी बीमारीको छूनेवाले सभीको यह बीमारी हो जानी चाहिये पर हम रोज देखते हैं कि ऐसा नहीं होता। अतः शीतलाके बीमारको छूनेसे डरनेकी जरूरत नहीं फिर भी सावधानीकी जरूरत है। एकदमसे यह भी नहीं कहा जा सकता कि शीतलाकी छूत लगती ही नहीं, जिनके शरीर उसकी छूत ग्रहण करने योग्य है वे शीतलाके रोगीको छूएँगे तो छूतका असर जरूर पड़ेगा और यही कारण है कि जिस जगह शीतलाकी बीमारी फैलती है वहा बहुत लोग एक ही समय इसके चङ्गुलमे फँस जाते हैं। इस प्रकार इसे छूतकी बीमारी मानकर टीका लगाया जाता है और मनुष्योंको समझाने अथवा बहकानेकी कोशिश की जाती है कि टीका लेनेसे निर्दोष शीतला

निकलती है और उससे शीतलाकी बीमारीका होना बन्द हो जाता है। गायके थनमें शीतलाका लस लगाकर उसमेंसे निकली हुई पीबको चमड़े द्वारा हमारे शरीरमें प्रवेश करनेका नाम टीका है। कहा जाता है कि ऐसा करनेसे मनुष्यके शरीरपर शीतला निकल आती है और वे महाशीतलाके भयसे बच जाते हैं। पहले यह बात मानी जाती थी कि इस प्रकारसे एक बार शीतला आनेसे उस मनुष्यको फिर नहीं निकलती। किन्तु अनुभव द्वारा जब यह बात मालूम हुई कि टीका लेनेपर भी मनुष्य बहुत दिनों-तक इस रोगसे मुक्त नहीं रह सकता तब यह कहा जाने लगा कि अमुक समयके बाद फिर भी टीका लेना चाहिये। अब आजकल तो यह रिवाज हो गया है कि जहाँ-जहाँ जब-जब शीतलाकी बीमारी शुरू हो तब-तब वहाँके सब लोगोंको चाहे वे टीका लगवा चुके हों या न लगवा चुके हों टीका अवश्य लगवाना चाहिये। इस प्रकार अब बहुतसे ऐसे मनुष्य दिखाई पड़ने लगे हैं जिन्होंने पाँच छः या इससे भी अधिक बार टीका लिया है।

टीका लेना बहुत ही जङ्गली रवाज है। इस जमानेमें फैले हुए भ्रमोंमें यह एक विषैला भ्रम है। जङ्गली समझे जानेवाले लोगोंमे ऐसे भ्रम नहीं दिखलाई पड़ते। इस भ्रमके हिमायतियों-को इतनेहीसे सन्तोष नहीं होता कि जिसकी खुशी हो वह टीका लगवाये, बल्कि वे लोग इसके लिये लोगोंको मजबूर करते हैं। टीका लगवानेसे इनकार करनेवालेपर कानूनन मुकद्दमा चलाया जाता है और सख्त सजा दी जाती है। टीकेकी खोज सन् १७९८ ई० में हुई है। इससे मालूम होता है कि यह कोई पुरानी बहम नहीं है। इतने थोड़े समयसे लाखों आदमी इस बहमके शिकार बन गये हैं। जिन्हें टीका लगा दिया जाता है उन्हें शीतलासे बचा आदमी समझ लिया जाता है। पर यह माननेके लिये एक भी सबल कारण नहीं है। कोई नहीं कह सकता कि

टीका न लगवानेसे बड़ी शीतला निकलती ही है। इसके विरुद्ध टीका न लगवानेवालोंमें शीतला न निकलनेके अनेक उदाहरण दिखाये जा सकते हैं। जिन लोगोंने टीका नहीं लिया उनमें शीतला निकलनेके उदाहरण द्वारा यह बात नहीं कही जा सकती कि यदि ये लोग टीका लेते तो शीतलासे मुक्त रहते।

टीका बहुत गन्दा इलाज है। इसमें यही दोष नहीं कि गायकी शीतलाकी लस हमारे शरीरपर लगायी जाती है, बल्कि मनुष्यकी शीतलाकी लस भी लगायी जाती है। लोग साधारणतः पीबको देखकर कै कर देंगे। जिनके हाथमें पीब लग जाती है वे साबुनसे हाथ धोते हैं। यदि हमें कोई दिल्लगीसे भी पीब चखनेको कहे तो सुनकर हमारा जी मचलने लगेगा और हम लड़नेको तैयार हो जायँगे। फिर भी शायद ही किसीने सोचा होगा कि टीका लेकर हम पीब अर्थात् सड़ा हुआ खून खाते हैं। यह प्रायः सब लोग जानते होंगे कि कितने ही को बीमारीमें दवा या प्रवाही खुराक चमड़ेके मार्गसे भीतर पहुँचाई जाती है। इसका असर मुँहसे खाई हुई खुराकसे जल्दी होता है। मुँहसे खाई हुई चीज खूनके साथ फौरन नहीं मिल सकती पर चमड़ेके मार्गसे गई हुई चीज तुरन्त खूनके साथ मिल जाती है और जरा सी चीजका असर भी तात्कालिक होता है। इससे मालूम हो गया कि शरीरपर असर पहुँचानेमें चमड़े द्वारा गयी हुई दवा या खुराक मुँहसे खाई हुई चीजके समान ही है, तब हम शीतलासे बचनेके लिये पीब खाते हैं। कहावत है कि कायर मौतके पहले ही मर जाता है, शीतला निकलनेपर मौत या कुरूप होनेके भयसे टीका लेकर हम पहले ही मर जाते है।

इस प्रकार शरीरमें पीब डलवाना मेरी समझमें तो बिलकुल धर्मभ्रष्टता है। मांसाहारी मनुष्योंतक को खून खानेकी मनाही है और फिर जीवित प्राणियोंका खून और मांस तो खाया ही नहीं जाता। यह तो निरपराध जीवित प्राणीका खून है और वह

भी सड़ाया हुआ। यही हमें चमड़े द्वारा खिलाया जाता है। खून खानेके बदले हजार बार शीतला निकलना यहाँतक कि फौरन मर जाना भी आस्तिक मनुष्य पसन्द करेगा।

टीकेकी हानियोंके सम्बन्धमें इङ्गलैण्डके कितने ही विद्वान् मनुष्योंने विचार किया है। आजकल टीकेके विरोधके लिये वहाँ एक बड़ी भारी संस्था स्थापित है। इसके मेम्बर टीका नहीं लेते, वे टीकेके कानूनका खुल्लमखुल्ला विरोध करते हैं। कितने ही इसीके पीछे जेल भी जा चुके हैं। दूसरोंको भी समझाते हैं कि तुम टीका न लो। इसपर बहुतसी पुस्तकें लिखी गई हैं और खूब बाद-विवाद चल रहा है। टीकेके विरोधी अपने पक्ष समर्थनमें ये दलीलें रखते हैं—

१—गाय या बछियोंके थनमेंसे पीब निकालनेकी क्रियामें लाखों जीवित पशुओंपर बड़ी क्रूरताका व्यवहार किया जाता है। यह निर्दयता मनुष्य जातिकी दयावृत्तिको शोभा नहीं देती। मानव जातिका कर्त्तव्य है कि इस पीबसे कुछ लाभ होता हो तो भी उससे सदा परहेज करे।

२—इस पीबसे कोई लाभ नहीं—उलटे हानियाँ होती हैं; शरीरमें और बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। यह तो टीकेके हिमायती भी मानते हैं कि इसके प्रचारके बाद बहुतेरे दूसरे-दूसरे रोग फैले हैं।

३—जिन मनुष्योंसे मुख्य लस तैयार किया जाता है उनकी दूसरी-दूसरी बीमारियोंका लस सारी पीबमें होना सम्भव है।

४—यह विश्वास नहीं दिलाया जा सकता कि टीका लगवानेवाले शीतला रोगसे बच ही जायँगे। टीकेका निकालनेवाला डा० जेनर पहले कहता था कि एक हाथमें एक दफे टीका लगवा लेनेसे मनुष्य सदाके लिये मुक्त हो जाता है। फिर दोनों हाथोंमें और बादको दोनों हाथोंमें कई जगह टीका लगवानेकी बात निकली। फिर भी जब शीतला निकलने लगी तो कहा

जाने लगा कि टीका लगवानेके सात वर्ष बाद मुक्त रहनेकी गारन्टी नहीं दी जा सकती और अब तो सातके बदले तीन ही वर्ष गिने जाते हैं। डाक्टर लोग खुद भी कोई निश्चित बात नहीं कह सकते। वास्तवमें टीका लेनेसे शीतला न निकलेगी यह मानना भ्रम है। कोई नहीं साबित कर सकता कि टीका लेनेसे जिन्हें शीतला नहीं निकली उन्हे टीका न लेनेसे जरूर निकली।

५—आखिरी दलील—लस लेना बिलकुल गन्दा रिवाज है, अतः यह मानना मूर्खता है कि गन्दगीसे गन्दगी दूर हो जायगी।

इन तथा और दलीलों, उदाहरणों द्वारा उस सभाने अंग्रेज जनतापर बहुत अच्छा असर डाला है। इंगलैण्डके एक शहरमें उसकी आबादीका बहुत बड़ा भाग बिलकुल टीका नहीं लगवाता और उस शहरके लोगोंमें यह रोग बहुत कम दिखाई पड़ता है। इस सभाके परिश्रमी सभासदोंने खोजसे सिद्ध कर दिया है कि टीकेके बहमको जारी रखनेमें डाक्टरोंका स्वार्थ ही प्रधान कारण है। उन्हे हर साल प्रजाकी ओरसे हजारों पौण्ड टीका लगानेके काममें मिलते हैं, इसीसे जान या अनजानमें टीकेकी भयंकर हानियां इन्हे नहीं दिखलाई पड़तीं। कुछ डाक्टरोंका भी यही मत है। इनमेंसे कितने ही तो टीकेके सख्त विरोधी बन बैठे हैं।

हमें तब क्या टीका न लेना चाहिये? मैं बेखटके कहूँगा 'नहीं' फिर मैं भी इसके साथ एक अपवाद जोड़ देना चाहता हूँ। जान-बूझकर अपनी इच्छासे तो टीका किसीको न लेना चाहिये। पर हम जहाँ बसते हैं वहांके कानूनसे टीका लेना हमारा कर्त्तव्य है। इस देशके टीकेके कानून भंग करनेमें बड़ी मुसीबतमें फँसना पड़ता है, इसका विरोध करनेसे दूसरी तोहमतोंकी तरह हमपर जान-बूझकर सार्वजनिक स्वास्थ्यको जोखिममें डालनेकी भी तोहमत लगायी जाती है। तब हमारा क्या कर्त्तव्य है? अगर

हम ऐसी बस्तीमें रहते हों जहांकी अधिकांश जनता टीका लेना लाभदायक समझती हो तो हमें उस भागके विरुद्धाचरण न करना चाहिये। हां, जिन्हें मेरे बताये कारणोंसे टीका लेनेमें धर्मनाश मालूम हो उन्हें अकेले ही इसका विरोध करना चाहिये और जो कष्ट पड़े, भोगने चाहिये। शरीर सुखके विचारसे टीका लेना नापसन्द करनेवाले एकाएक इस कायदेके विरुद्ध नहीं चल सकते। उन्हें इस विषयका पूरा ज्ञान होना चाहिये। अपनी मानी हुई बात दूसरेको समझा देनेकी शक्ति होनी चाहिये। साथ ही लोकमतको बदलनेके लिये कटिबद्ध रहना चाहिये। जो ऐसा नहीं कर सकता वह केवल अपना ही हठ रखनेके लिये प्रजामतके विरुद्ध नहीं ठहर सकता। प्रायः हम कई कामोंको पसन्द नहीं करते पर जिस समाजमें रहते हैं उसकी खातिरसे हमें करने पड़ते हैं। समाजके सुभीतेके आगे हमें अपना सुभीता किनारे रख देना पड़ता है, बहुमतके विरुद्ध अकेला आदमी तभी खड़ा हो सकता है जब कोई धर्म या नीति सम्बन्धी बात पड़ जाय। जिस मनुष्यकी अपनी कोई राय न हो और केवल इस तरहके लेखोंको पढ़कर ही बहक जाय और अपने आलसीपनके कारण ही टीका न लेना चाहे, तो उसके लिये कानूनकी शरणमें रहना ही अच्छा है। टीका न लेनेवालोंको स्वच्छता इत्यादिके नियम समझकर उनका ठीक-ठीक पालन करना चाहिये। जो मनुष्य टीकेका लस तो नहीं लेना चाहता, किन्तु विषयभोग द्वारा उसका लस सदा लेता है अथवा आरोग्य सम्बन्धी अन्य नियम भंग कर सदा दुःख भोगता है, उसे उस समाज या देशकी विरुद्धता करनेका कोई अधिकार नहीं जिसमें टीका लेना आरोग्यके लिये आवश्यक माना जाता हो।

शीतलापर विचार करनेमें हम टीकेकी हानियां देख चुके। अब शीतला रोकनेके उपायोंपर विचार करना जरूरी है। जो

मनुष्य पहले प्रकरणोंके हवा, पानी और खुराकके नियमोंका पालन होशियारीके साथ करेगा, उसे तो शीतला निकलनेकी जरा भी सम्भावना नहीं, क्योंकि उसके खूनमें ही शीतलाके बीजोंके नाश करनेकी शक्ति मौजूद है। शीतला निकलनेपर भींगी चादर-बन्धन (वेट शीट-पेक) का इलाज बहुत चमत्कारिक होता है। बीमारको कम-से-कम तीन बार भींगी चादरमें लेटाना चाहिये। जलन बहुत कम हो जायगी, शीतलाके दाने मुरझा जायँगे। दानोंमें घाव हो जानेपर मरहम इत्यादि लगानेकी कोई जरूरत नहीं। यदि ऐसी एकाध जगहमें जहाँ कि मिट्टीकी पुलटिस बाँधी जा सके, घाव हो तो पुलटिस बाँध दें। रोगीको खानेके लिये भूखके अनुसार भात, नीबू, हलके और ताजे मेवे देने चाहिये। 'हलके' से अभिप्राय यह है कि शीतलाकी जलनमें खजूर और बादाम आदि पौष्टिक मेवे न खाने चाहिये। वेट शीट पेक चादरके बन्धनसे एक सप्ताह में दाने जरूर मुरझा जाने चाहिये। न मुरझाएँ तो समझना चाहिये कि अभी शरीरके अन्दरका बाकी जहर निकल रहा है। शीतलाको भयंकर बीमारी समझनेकी कोई वजह नहीं हैं। बल्कि इससे तो यह सूचित होता है कि शरीरके अन्दरका उतना रोग बाहर निकल जानेसे शरीर नीरोग हो गया। यह बहुतेरे रोगोंके लिये कहा जा सकता है पर शीतलाके लिये विशेषरूपसे ठीक है।

शीतलाका रोगी रोग दूर हो जानेपर कुछ दिन कमजोर रहता है। कितने रोगी बादको किसी-न-किसी दूसरी बीमारीमें फँसे देखे जाते हैं। इसका कारण उनके वे सब उपचार हैं जो बीमारी दूर करनेके लिये किये जाते हैं। बुखारमें कुनैन खानेसे बहुत बार कान बहरे पड़ जाते हैं। किसीको क्विनिनिज्म क्विनाईन सेवनसे बहरा तथा संज्ञाशून्य हो जाना) नामक भयंकर बीमारी हो जाती है। व्यभिचारसे होनेवाले रोग मिटानेके लिये पारा इत्यादि दवाइयाँ खिलाई जाती हैं और यह प्रसिद्ध बात है

कि पारेसे उत्पन्न होनेवाले रोगोंसे मनुष्य सदा पीड़ित रहता है। दस्त न होनेपर जुलाब लेनेवालोंको प्रायः अर्श-बवासीर वगैरहकी बीमारियाँ होती देखी जाती हैं। इन सब उदाहरणोंसे यह फल निकलता है कि दवाके प्रयोगसे बीमारी तो नहीं ही मिटती बल्कि उससे और रोग उत्पन्न हो जाते हैं। रोग होनेपर उसके कारणोंकी खोज की जानी चाहिये। फिर उन्हें दूर करके रोगको बिदा दें और आगेसे प्रकृतिके नियमोंकी रक्षा करें। इससे बढ़कर दूसरी कोई पुष्टिकारक भस्म नहीं। धातु इत्यादिको फूँककर जो लोहा भस्म इत्यादि भस्में बनाई जाती हैं उन्हें अक्सीर दवाइयाँ कहा जाता है, परन्तु यह झूठी बात है। इनमें कुछ असर देख पड़ता है परन्तु यह असर शरीरको जितने अंशमें ठीक करता जान पड़ता है उतने ही अंशमें मनोविकारोंको बढ़ाता है। सारांश इनका असर रोगीके लिये हानिकारक ही होता है। शीतलाकी बीमारीमें चादरके बन्धनका प्रयोग सर्वमान्य समझा जाता है। शीतला अधिकतर फिर नहीं निकलती। इससे शरीर प्रायः नीरोग हो जाता है, शरीरका सारा जहर बाहर निकल जाता है।

शीतला मिट जानेपर जब दाने सूख जायँ तब रोगीके शरीर पर सदा "ओलिव आयल" की मालिश करनी चाहिये। उसे रोज नहलाना चाहिये। इससे शीतलाके दाग बिलकुल जाते रहेंगे और नया चमड़ा आ जायगा।

७—छूतके और और रोग

हम शीतलाके विषयमें भलीभाँति विचारकर चुके, अब रहीं शीतलाकी मौसेरी बहनें—राउत माता तथा छोटी शीतला वगैरह। इनके सिवा प्लेग, कालरा (हैजा), उड़ती पेचिश भी छूतके रोग हैं। हम राउत माता तथा छोटी शीतलासे नहीं डरते। कारण, इनसे न बहुत मौतें होतीं और न शरीर ही

बेडौल होता है। बाकी सब असर तो शीतला (बड़ी चेचक) हीके समान है। शीतलाके समान इनकी भी छूत लग जाती है। इनमें ठण्ढे पानीका उपचार और 'वेट-शीट-पेक' बहुत अक्सीर है। इन बीमारियोंमें खुराक बहुत ही हलकी और सादी होनी चाहिये। यदि ताजे मेवों और फलोंपर—निर्वाह किया जाय तो ये रोग बड़ी शीघ्रतासे घटने लगते हैं।

प्लेग बड़ी भयङ्कर बीमारी है। अंगरेजीमें इसका पूरा नाम 'ब्यूबानिक प्लेग' है। सन् १८९६ ई० में इसके मनहूस कदम हिन्दुस्थानमें पड़े। तबसे लाखों मनुष्य इसकी भेंट हो चुके। डाक्टरोंने बहुत सिर मारा, किन्तु अभीतक इसका कोई समुचित इलाज नहीं निकाल सके। आजकल शीतलाके टीकेके समान इस बीमारीके लिये भी टीका लगाया जाता है। इसके द्वारा मनुष्यमें प्लेगके बुखारका हल्का असर उत्पन्न करके डाक्टर लोग समझते हैं कि इससे प्लेगका बुखार नहीं हो सकता। यह भी शीतलाके टीकेकासा ही ढोंग और उतना ही पापपूर्ण प्रयोग है। जैसे कोई यह नहीं कह सकता कि शीतलाका टीका न लेनेसे शीतला निकलेगी ही वैसे ही यह भी नहीं कहा जा सकता कि प्लेगका टीका न लेनेसे प्लेग होगा ही। अबतक प्लेगकी कोई दवा नहीं निकली, इसीलिये यह बात निश्चितरूपसे नहीं कही जा सकती कि पानी और मिट्टीके उपचारसे इसमें लाभ जरूर ही होगा फिर भी जिसे मरनेका भय न हो, जो मनुष्य ईश्वरपर विश्वास रखता हो उसके लिये नीचे लिखे उपाय बताये जा सकते हैं—

१—बुखार आने अथवा उसके आनेके कुछ भी चिह्न दिखाई पड़नेपर तुरन्त ही 'वेट-शीट पेक' (भींगी चादरोंका बन्धन) लेना चाहिये।

२—गाँठपर मिट्टीकी मोटी पुलटिस बाँधनी चाहिये।

३—बीमारको खाना बिलकुल नहीं देना चाहिये।

४—प्यास लगे तो नीबूका ठण्ढा पानी देना चाहिये।

५—बीमारको साफ और खुली हवामें लिटाना चाहिये।

६—उसके पास एक आदमीके सिवा दूसरेको नहीं जाने देना चाहिये। बीमार यदि किसी भी इलाजसे अच्छा हो सकता है तो वह इस इलाजसे भी अवश्य अच्छा हो जायगा।

प्लेगके बुखारकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें अबतक कोई निश्चित बात नहीं मालूम हुई। बहुतोंकी राय है कि यह रोग चूहों द्वारा फैलता है। बात निराधार नहीं है। जहाँ प्लेग फैला हो वहाँ चूहेवाले घरके साफ करवानेकी बहुत जरूरत है। अन्न इत्यादि-को इस प्रकार रखना चाहिये जिससे चूहोंको खानेही को न मिले और वे न आवें। चूहोंके बिल इत्यादि बन्द कर देने चाहिये और जिस घरसे चूहोंको दूर न रख सकें उसे जरूर खाली कर देना चाहिये।

पर प्लेग न होने देनेके लिये सबसे उत्तम तो यह है कि हम पहले हीसे साफ और उत्तम भोजन करें, मिताहारी रहें, व्यसनों-को छोड़ दें, कसरत करें; खुली हवामें रहें, घर इत्यादि साफ रखें और अपनी स्थिति ऐसी बना लें कि प्लेगकी हवा हमें बिलकुल न लग सके। हमें सदा ही ऐसी स्थितिमें रहना उचित है, पर सदा न हो सके तो कम-से-कम प्लेगके दिनोंमें हमें इसी प्रकार चलना चाहिये।

प्लेगसे भी विशेष भयङ्कर और शीघ्र उत्पन्न होनेवाला रोग सन्निपातिक ज्वर है। इसे अङ्गरेजीमें न्यूमोनिक प्लेग कहते हैं। इसमें बीमारको साँस लेनेमें बहुत कष्ट होता है, बुखार बड़े जोरका रहता है और रोगी प्रायः बेहोश रहता है। इस काल-ज्वरसे शायद ही कोई मनुष्य बचता हो। सन् १९०४ ई० में जोहान्सबर्गमें इसी प्रकारका प्लेग फैला था, २३ बीमारोंमें केवल एक ही बचा था। इसका कुल हाल पहले दिया जा चुका है। इस बीमारीपर वे सब उपचार चल सकते हैं जो प्लेगके लिये बताये गये हैं, फरक केवल यह है कि इसमें मिट्टीकी पुलटिस

छातीके दोनों भागोंपर बाँधनी चाहिये। यदि बीमारको 'वेटशीट-पेक' में रखनेका समय न रह गया हो तो उसके सिरपर मिट्टीकी पतली पुलटिस रखनी चाहिये। इस बीमारीमें रोगके उपचारोंकी अपेक्षा पहलेहीसे इसके रोकनेकी तदबीरें करना बहुत ही सहज और अच्छा है। तदबीरें वही हैं जो प्लेग रोकनेके लिये बताई जा चुकी हैं। बुद्धिमानी इसीमें है कि रोग होनेके पहले ही उसे रोकनेका प्रयत्न किया जाय।

हैजे—कालराकी बीमारीको हम बहुत भयङ्कर समझते हैं, परन्तु असलमें वह प्लेगसे बहुत हल्का है। इसमें वेट-शीट-पेक बहुत काम नहीं दे सकता। कारण, इसमें बीमारके बदन और जाँघोंमें सनसनी पैदा हो जाती है। ऐसे समयमें पेटपर मिट्टीकी पुलटिस बांधे और जहाँपर सनसनी होती हो वहाँ गरम पानी की बोतलोंसे सेंके! बीमारके पैर इत्यादिपर राईके तेलकी मालिश करे। खाना कदापि न दे। पास रहनेवालोंको चाहिये कि बीमारको हिम्मत देते रहें जिससे वह घबड़ा न जाय। यदि उसे बहुत जल्द-जल्द दस्त आते हों तो चारपाईसे अलग ले जाकर बिठाना ठीक नहीं, उसीपर एक बिना किनारेका छिछला बर्तन रखकर पाखाना फिराना चाहिये। यदि बीमारी शुरू होते ही इलाजकी ऐसी व्यवस्था कर दी जाय तो बीमारको तकलीफ पहुँचना बहुत ही कम सम्भव है। हैजा फैलनेपर उससे बचनेके भी बहुतसे उत्तम उपाय हैं। यह रोग प्रायः गरमीके दिनोंमें होता है। लोग एकदम कच्चे या सड़े फल खूब खाते हैं। और मौसिमोंमें फल खानेकी आदत होती नहीं। गरमीके दिनोंमें अनेक प्रकारके फल पकते हैं और सुस्वादु होनेपर हम उन्हें खूब खाते हैं। रोजका भोजन तो करते ही रहते हैं। इससे हमपर इन फलोंका एक-बारगी बहुत बुरा असर पड़ता है। हमारे शरीरमें पेट इत्यादिकी कोई न-कोई बीमारी तो बनी ही रहती है। जब इन्हें शरीर नहीं सँभाल सकता तब हैजा हो जाता है। और लोगोंके भी शरीर

ऐसे ही रहते हैं, इससे उन्हें भी हैजा हो जाता है। बीमारके पाखानेका कोई खास बन्दोबस्त नहीं किया जाता। पाखानेके जन्तु हवाको बिगाड़ा करते है। इसके सिवा गर्मीके दिनोंमें पानी भी खराब रहता है। बहुत ज्यादा सूख जानेके कारण पानी मैला हो जाता है और उसमें जीव-जन्तु पड़ जाते हैं। इसे हम बिना उबाले और बिना छाने पीते हैं। फिर रोग कैसे न हो? प्रकृति-देवीने हमारा शरीर बहुत ही मजबूत बनाया है, इसीसे इन सब खराबियोंके होते हुए भी जी सकते हैं। यदि यह बात न हो तो अपने आचरणोंकी बदौलत तो हमें बहुत जल्दी संसारसे कूच कर जाना चाहिये।

अब उन सब सावधानियोंपर विचार करना चाहिये जो हैजेके समय बहुत आवश्यक हैं। खुराक बहुत हल्की और थोड़ी हो। अच्छे मेवे जरूर खाये जायँ; किन्तु खूब देख भालकर। लोभ या स्वादके वशीभूत होकर दागी—सड़े हुए आम या दूसरे फल कदापि न खाने चाहिये। साफ हवामें रहना जरूरी है। पानी सदा उबालकर मोटे और साफ कपड़ेसे छाना हुआ पीना चाहिये। बीमारका पाखाना जमीनमें गाड़कर उसपर सूखी मिट्टीकी मोटी तह डाल देनी चाहिये। यदि सब लोग पाखाना जाते समय उसपर राख डालनेकी आदत डाल लें तो बीमारीका भय अधिकांशमें बहुत कम हो जाय। वास्तवमें तो इस नियमको बराबर पालन करनेकी आवश्यकता है। बिल्ली तक जमीनमें गढ़ा खोदकर पाखाना फिरती है और पैरों द्वारा मिट्टी डालकर उसे ढक देती है। परन्तु हम छूआछूत या घृणाके मारे ऐसा नहीं करते और इस प्रकार बीमारी फैलानेमें मानो हम पर्याप्त सहारा देते हैं। यदि राख न मिल सके तो सूखी मिट्टी काममें लानी चाहिये। यदि मिट्टीके ढोंके हों तो उन्हें फोड़कर चूर कर लेनी चाहिये।

उड़ती पेचिश बहुत मामूली छूतका रोग है। इसमें यदि

पेड़ पर मिट्टीकी पुलटिसका ठीक उपयोग किया जाय और बीमार-को खाना बिलकुल न दिया जाय तो यह बहुत जल्द जाती रहती है। बीमारके पाखानेको ऊपर लिखी रीतिके अनुसार गड़वा देना इसमें भी जरूरी है। पानीके विषयमें भी हैजेके अनुसार साव-धानी रखनी चाहिये।

अन्तमें यह कहना है कि ऊपर बतलाई हुई छूतकी बीमा-रियोंमें रोगी तथा उसके साथी सम्बन्धियोंको हिम्मत नहीं छोड़नी चाहिये। भयसे घबराकर बीमार जल्द मर जाता है और उसके आस-पास रहनेवाले मित्रों या सम्बन्धियोंके भी बीमार हो जाने-की सम्भावना रहती है।

८—सौरी

साधारण रोगोंके सम्बन्धमें विचार किया जा चुका है। ये प्रकरण इसलिये नहीं लिखे गये कि दुनियामें दिखलाई पड़नेवाले सब रोगोंके विषयमें विचार किया जाय अथवा बतलाया जाय। बल्कि इनका उद्देश्य बहुतसे जाने-बूझे रोगोके उपचारपर विचार करके उनका तथा रोगोंकी बतानेका है। रोगोंसे बुरी तरह घिरे हुए और मौतसे डरनेवाले लोगोंके सामने चाहे जैसा पुस्तकें रखिये वे वैद्योंके पास गये बिना न मानेगे। इन प्रकरणोंका अधिकसे अधिक इतना ही मतलब है कि साधारण बीमारीवाला मनुष्य अच्छा हो जाय, आरोग्य-रक्षामें नियमोंका पालन करे जिसमें फिर बीमार न पड़े या भयङ्कर रोगोंके पजेमें न आ जाय। हमने जो थोड़ीसी बातें बताई हैं उन्हींके पालनेवाले बहुत थोड़े निकलेंगे। इन प्रकरणोंके लिखनेका यही एक अभिप्राय है कि ऐसे थोड़े आदमियोंके लिये यहां थोड़ी-सी सूचनाएँ उपयोगी सिद्ध हों। बस, अब सौरी शिशुपालन और आकस्मिक घट-नाओंपर थोड़ा विचार और करना है।

लोगोंने सौरीके विषयको बहुत बढ़ा दिया है। नीरोग स्त्रियों-

के लिये प्रसव बिलकुल भयङ्कर नहीं होता। गाँवमें प्रसव एक मामूली बात समझी जाती है। गर्भवती स्त्रियाँ अन्ततक अपना काम किये जाती हैं। बच्चा पैदा होते समय उन्हें कोई विशेष कष्ट नहीं होता। ऐसे भी उदाहरण देखे गये हैं कि मजदूरी करनेवाली स्त्रियाँ बच्चा पैदा होनेके बाद ही काममें लग जाती हैं। दूसरे जीवोंमें भी तो हम देखते हैं कि वे प्रसवकालमें दुःख नहीं भोगते।

तब शहरी स्त्रियाँ क्यों दुःख भोगती हैं? प्रसव होते समय उन्हें क्यो असह्य वेदना होती है? बच्चा उत्पन्न होनेके पहले और बादमें क्यों उनकी विशेष सँभाल करनी पड़ती है? इन प्रश्नोंपर विचार कीजिये।

शहरकी स्त्रियोंका रहन-सहन बिलकुल अस्वाभाविक होता है। उनकी खुराक, उनका पहनावा प्रकृतिके बिलकुल विरुद्ध होता है। पर इसका मुख्य कारण कुछ और ही है। छोटी अवस्थाकी लड़की यदि गर्भ धारण करे, गर्भ धारण करनेके बाद भी यदि पुरुष उसका संसर्ग न छोड़े और बच्चा होनेके बाद सौरीसे निकलते ही फिर पुरुषका उसके साथ ऐसा संसर्ग रहे जिससे वह थोड़े ही दिनों बाद फिर गर्भ धारण कर ले तो कहिये कि ऐसी स्त्री बिना दुःख भोगे कैसे रहेगी? आजकल लाखों लड़कियों और स्त्रियोंकी ऐसी भयङ्कर और करुणाजनक स्थिति प्रायः देखी जाती है। हमारी समझमें तो ऐसी शहरी जिन्दगी और नरकमें कुछ भी अन्तर नहीं है। पुरुष जबतक इस प्रकार राक्षस बने रहेंगे तबतक स्त्रियोंको सुख नहीं मिल सकता। बहुतेरे पुरुष स्त्रियोंको दोष देते हैं। हमने यह प्रकरण दोषोंकी तुलना करनेके लिये नहीं लिखा। दोनोंका दोष हो अथवा किसी एकका दोष हो, किन्तु यह जानकर कि यह दोष है माता-पिताको, बालक पति और बालिका स्त्रीको सावधान अवश्य हो जाना चाहिये। जबतक बाल-विवाह, गर्भ रह जानेके बाद और प्रसव कालके

बादकी विषय-प्रवृत्ति न रुकेगी तबतक सुखपूर्वक प्रसव नहीं हो सकता। प्रसवके साधारण कष्टोंको स्त्रियाँ इस विश्वासके कारण सह लेती हैं कि प्रसवमें वेदना होना तथा महीने डेढ़ महीने कमजोर रहना साधारण बात है। परन्तु इस विषयका वास्तविक ज्ञान न होनेसे उनकी सन्तति दिन-दिन निर्बल, अज्ञान और निस्तेज होती जाती है। यह परिणाम भयङ्कर है। इसके रोकनेके लिये प्रत्येक मनुष्यको जी-जानसे प्रयत्न करना चाहिये। यदि एक पुरुष और एक स्त्रीने भी इस अनाचारको छोड़ दिया तो आंशिकरूपमें उतना ही सारे संसारको लाभ पहुँचेगा। इसमें किसीको किसीकी राह देखनेकी जरूरत नहीं है।

ऊपरके विचारोंके अनुसार सबसे पहली बात तो यह होनी चाहिये कि गर्भ धारण करनेके उपरान्त पुरुषोंको स्त्रियोंका संसर्ग बिलकुल नहीं करना चाहिये। इसके बाद आनेवाले नव-महीनोंके अन्दर स्त्रीपर विशेष जिम्मेवारी रहती है। यह बात समझ रखनी चाहिये कि मांके इन नव महीनोके रहन-सहनपर ही बालकका चरित्र अवलम्बित रहता है। माँ यदि प्रेमसे परिपूर्ण होगी तो उसका बच्चा भी प्रेम परिपूर्ण होगा। माँ क्रोधी हुई तो बच्चा भी क्रोधी पैदा होगा। इसलिये इन नव महीनोंमें स्त्रीकी आन्तरिक वृत्तियाँ बहुत ही उत्तम रहनी चाहिये। इस समय माताको सदा पवित्र कामोंमें लगे रहना चाहिये। कभी क्रोध न करे, दयाको बढ़ावे, उदारचित्त बने, चिन्ता और भय न करे, पशुताको मनमें भी न आने दे, निकम्मी बातोंमें समय न खोवे और कभी असत्य न बोले। जो स्त्री इन सब नियमोंका पालन करेगी उससे पैदा हुआ बालक तेजस्वी हुए बिना नहीं रहेगा।

जैसे मनको शुद्ध रखना जरूरी है वैसे ही शरीरको भी शुद्ध रखना चाहिये। गर्भवती स्त्रीको सदा स्वच्छ वायु सेवन करनी चाहिये। गर्भावस्थामें माँको अधिक साँस लेनी पड़ती है, इस-

लिये उसे ऐसी स्थितिमें रहना चाहिये जहाँ हवा बहुत ही साफ हो। भोजन जितना पचे उतना ही करना चाहिये। भोजन स्वच्छ और पिछले प्रकरणोंमें बताये अनुसार हो। उसे गेहूँकी बनी चीज और जैतूनका तेल उतना खाना चाहिये जितना पच जाय। दस्त न होता हो तो जैतूनके तेलकी मात्रा बढ़ा देनी चाहिये। किसी दवाके लिये दौड़नेकी जरूरत नहीं। जी मचलाये और उल्टी होती जान पड़े तो नीबूका रस बिना शक्कर डाले पानीमें मिलाकर पीना चाहिये। इन नव महीनोंमें मसाला मिरचा इत्यादि तो जरूर ही छोड़ देना चाहिये।

कितनी ही स्त्रियोंको इस समय खूब दोहद (तरह-तरहकी चीजोंपर मन चलना) होता है। इसका सरल उपाय यह है कि उन्हें सदा कूनेबाथ लेना चाहिये। इस बाथके लेनेसे शरीरका बल बढ़ेगा, कान्ति बढ़ेगी और प्रसवकालमें पीड़ा बहुत कम होगी। बहुतसी स्त्रियाँ इसका अनुभव कर चुकी हैं। दोहदके समय मनके ऊपर अंकुश भी रखना चाहिये। एक दो दफे जिस चीजपर मन दौड़े उस वस्तुका त्याग करनेसे वह भूल सकती है। माता-पिताको उचित है कि वे गर्भस्थ बच्चेकी रक्षाका विचार सदा करते रहें

पुरुषको उचित है कि वह ऐसे समयमें स्त्रीके साथ लड़ाई झगड़ा करके उसे घबराहटमें न डाले। उसे ऐसे काम करते रहने चाहिये कि जिससे स्त्री खुश और सुखी रहे। यदि घरका काम-काज बहुत हो तो उसे हलका कर देना चाहिये। गर्भवती स्त्रीके लिये थोड़ी देरतक खुली हवामें रोज घूमने जाना आवश्यक है। इस बातकी बड़ी सावधानी रखनी चाहिये कि गर्भवती स्त्रीके पेटमें कोई भी दवा न जाय।

६—शिशु-पालन

दाईके जानने योग्य सब बातें लिखना इस प्रकरणका उद्देश्य

नहीं है। हम इसमें केवल उन्हीं बातोंका विचार करेंगे जो बच्चे पैदा होनेके बाद बरती जानी चहिये। पिछले प्रकरण पढ़नेवाले समझ सकेंगे कि प्रसूता स्त्रीको अन्धेरी कोठरी, गन्दे बिछौने और बन्द मकानमें रखनेकी कोई जरूरत नहीं है और न यह कि उसकी चारपाईके नीचे अङ्गीठियाँ रखकर उसे आगकी गरमीसे झुलस दिया जाय। प्रसूता स्त्रीको अन्धेरी कोठरीमें रखनेका रवाज चाहे जितना पुराना हो किन्तु है वह हानिकारक। और उसे बन्द मकानमें रखकर हवा न आने देनेका रवाज इससे भी अधिक हानिकारक है। चारपाईके नीचे अङ्गीठी रखनेका रवाज अनावश्यक और बहुत ही हानिकारक है। सरदीके दिनोंमें प्रसूता स्त्रीके लिये विशेष गरमी जरूर चाहिये। उसके लिये उसे अधिक ओढ़ानेकी जरूरत नहीं है। यदि कोठेमें अधिक सरदी रहती हो तो उसकी हवा गरम करनेके लिये आग रखी जा सकती है, पर आग बाहर सुलगाई जानी चाहिये और जब बिलकुल धुआँ न रहे तब अन्दर लाकर रखी जाय। पर चारपाईके नीचे अङ्गीठी रखनेकी जरा भी जरूरत नहीं है। प्रसूता स्त्रीके विस्तरेपर गरम पानीकी बोतलें रखनेसे भी गरमी आ सकती है। प्रसूता स्त्रीको मैले-कुचैले और गन्दे कपड़ोंमें लेटानेका रवाज भी बहुत ही घातक और भ्रमपूर्ण है। सौरीसे निकलनेके बाद सब कपड़े धो तथा साफ करके काममें लाये जा सकते हैं।

बच्चेके स्वास्थ्यका सारा आधार माँके स्वास्थ्यपर निर्भर है, इसलिये ऊपर कही सावधानी रखनेके उपरान्त माँको ऐसी हितकर खुराक देनी चाहिये जो उसकी प्रकृतिके अनुकूल हो। गोंदके पाक इत्यादि देनेसे कोई लाभ नहीं मालूम होता। प्रसूता स्त्री गेहूँकी चीजें, केले इत्यादि फलोंमें जैतूनका तेल मिलाकर खाय तो उसके शरीरमें गरमी रहेगी और दूध बहुत अच्छा उतरेगा। जैतूनका तेल सेवन करनेसे दूध रेचक रहेगा और उससे बच्चेको दस्त हमेशा खुलकर होगा। बच्चेके शरीरमें कोई रोग

दिखलाई पड़नेसे तुरन्त माँकी तबीयतकी जाँच करनी चाहिये, बच्चेको दवा देना उसे हाथसे खो बैठना है। बच्चोंका मेदा बहुत ही नाजुक होता है, इससे दवा इत्यादिका जहर तुरन्त बढ़ता है। इस समय जो दवा देनी हो माता हीको दें, क्योंकि दवाका गुण सूक्ष्मरूपसे माताके दूधमें उतर आता है। बच्चेको खाँसी हो जाय या दस्त आने लगे तो घबड़ाना नहीं चाहिये। एक आध दिन देखनेपर उसका विशेष कारण ढूँढ़कर उसे दूर कर देना चाहिये। बीमारी दूर हो जायगी। दौड़-धूप तथा दवा-दारू करनेसे तबीयत जरूर खराब होगी।

बच्चेको गुनगुने पानीसे हमेशा नहलाते रहें। यथासाध्य कपड़े कम पहनावें। कुछ महीनेतक कपड़े बिलकुल न पहिनाये जायँ तो और भी अच्छा। बच्चेको एक छोटीसी नरम सफेद सूती चादरमें लपेटकर ऊपरसे गरम कपड़े ओढ़ा देना सबसे अच्छा है। इससे बच्चेको कुरते आदि पहनानेकी अड़चन दूर हो जायगी। कपड़े कम खराब होंगे और उसका गठन नाजुक न होकर मजबूत होगा। नालके ऊपर चौपरता किया हुआ बारीक कपड़ा रखकर उसके ऊपर पट्टी बाँध देनी चाहिये। नाल-पर डोरी बाँधकर उसे गलेमें लटका देनेका रवाज बुरा है। नाल-परकी पट्टीको सदा खोलते रहना चाहिये। नालके आसपासका भाग यदि गीला दिखलाई पड़े तो स्वच्छ चावलोंका छना हुआ बहुत ही बारीक आटा रूईसे छिड़क देना चाहिये, इससे गीला भाग सूख जायगा।

माताके स्तनोंमें खूब दूध आता हो तो बच्चेको कोई दूसरी खुराक नहीं देनी चाहिये। दूध कम हो तो गेहूँको भून-पीसकर गरम पानी और थोड़ासा गुड़ मिलाकर पिलानेसे दूधकासा ही लाभ होता है। आधा केला मसलकर आधे चम्मच जैतूनके तेलमें खूब मिलाकर खिलानेसे अच्छा लाभ होगा। गायका दूध पिलाना हो तो पहले-पहल एक भाग दूधमें तीन भाग शुद्ध पानी

मिलाकर उसे इतना गरम करे कि एक उबाल आ जाय, तब इसमें थोड़ासा साफ गुड़ डाल दें। गुड़के बदले शक्कर डालनेसे हानि होती है। यदि बच्चेको धीरे-धीरे ताजे फल और मेवे ही ज्यादा खिलाये जायँ तो उसका खून शुद्ध होता जायगा और बच्चा तेजस्वी तथा बलवान होगा। जो माताएँ बच्चोंको दाँत आनेसे पहले या दाँत आते ही दाल, भात और शाक इत्यादि देने लगती हैं वे निस्संदेह उनके लिये काँटे बोती हैं। बच्चोंको चाय या काफी नहीं पिलानी चाहिये।

बच्चा जब बड़ा होकर चलने लगे तब उसे कुरते इत्यादि पहनाने चाहिये। जूतोंकी जरा भी जरूरत नहीं। बच्चोंको काँटों इत्यादिमें तो चलना नहीं पड़ता। नंगे पैर रहनेसे उनके पैर मजबूत होंगे। जूते पहननेसे पैर सँकड़े पड़कर उनमें खूनके ठीक तौरपर न फिर सकनेकी अड़चन भी मिट जायगी। शोभा के लिये रेशमी कपड़े, सुनहले गोटेकी कीमती टोपी और गहने आदि पहनाना निहायत जंगली घातक रीति है। प्रकृतिने उसे जो सुन्दरता—कान्ति दी है उसे हम बढ़ा सकते हैं यह मानना झूठा घमण्ड और मूर्खता है। सदा याद रहे कि बच्चे-की शिक्षा जन्म समयसे ही प्रारम्भ हो जाती है। उसके सच्चे शिक्षक माता-पिता ही है। बच्चोंको धमकाना, उनके शरीरपर आभूषण लादना, उन्हे लादे रहना, खूब ठूँस-ठूँसकर खिलाना आदि बातें शिक्षाके नियमोंके प्रतिकूल हैं। चिड़चिड़े माँ-बापके पास रहकर बच्चे चिड़चिड़ापन और नाजुक माँ-बापके पास रहकर नजाकत सीखेंगे। बोल-चाल आदि सभी बाते माता-पिताकी बातोंके सदृश ही होगी। माता पिता के मुहसे शुद्ध उच्चारण होगा तो बच्चे भी शुद्ध बोलेंगे, माता-पिता तुतलाते हुए बोलते होंगे तो बच्चे भी तुत-लायेंगे। माता-पिताके मुहसे गालियाँ निकलेंगी तो बच्चे भी गाली देना सीखेंगे। माँ-बाप अनीति करते होंगे तो बच्चे भी जरूर अनीति

ग्रहण करेंगे। मातापिता जो कुछ खाते पीते होंगे बच्चे भी वही चीजें खाने-पीने लग जायँगे। यह कहावत बिलकुल ठीक है कि 'बाप जैसा बेटा'। हाँ, बाप-शब्दका अर्थ माँ-बाप समझना चाहिये। सारांश, माता-पिताके पास घरमें रहकर बच्चेको जो शिक्षा मिलती है वह फिर कभी नहीं मिल सकती।

इन बातोंसे समझा जा सकता है कि माता-पिताका कर्त्तव्य कितना भारी है। मनुष्य जातिका सबसे पहला कर्तव्य है कि अपने बच्चोंको सदाचारकी शिक्षा देकर उन्हें ऐसा बनावें कि वह अपनी और उनकी शोभा बढ़ा सके। फल और वृक्षोंके संबंधमें हम देखते हैं कि केलेके पेड़से केला ही उत्पन्न होता है। जो पेड़ अच्छे होते हैं उनमें फल भी अच्छे ही लगते हैं। अच्छे जानवरोंके बच्चे भी अच्छे ही उत्पन्न होते हैं। मनुष्य इस नियम-को भंग करते हैं। पवित्र मालूम होनेवाले माता-पिताके बच्चे अपवित्र होते दिखलाई पड़ते हैं। तन्दुरुस्त दिखाई पड़नेवाले माता-पिताके बच्चे रोगी होते देखे जाते हैं। इसका मुख्य अथवा एक ही कारण यह है कि हम प्रायः माँ-बापकी पदवीके योग्य हुए बिना भी बेखटके माँ-बाप बन जाते हैं। तो फिर बच्चोंकी स्वास्थ्य-रक्षा कैसे हो? पर सदाचारी माता-पिताका कर्त्तव्य है कि वे अपने बच्चोंको सुयोग्य बनावें। इसके लिये माता-पिता दोनोंको शुद्ध शिक्षाकी आवश्यकता है। जो माता-पिता ऐसी शिक्षा पाये हुए न हों और यदि वे अपनी भूल समझ जायँ तो उन्हें शिक्षाके लिये अपने बच्चोंको सुशिक्षित और सदाचारी मनुष्योंको सौंपना चाहिये। यह आशा व्यर्थ है कि बच्चे पाठ-शालामें जाकर सदाचारी बन जायँगे। सदाचार सिखानेका एक ही मार्ग है कि उन्हें सदा अच्छी संगतिमें रखा जाय। घरमें एक प्रकारकी और पाठशालामें दूसरे प्रकारकी शिक्षा पाकर बच्चा कभी नहीं सुधर सकता। इन विचारोंके अनुसार शिक्षा देनेका कोई खास समय नहीं मालूम होता। पैदा होते ही बच्चेकी शिक्षा

शुरू हो जाती है, तभीसे उसे शारीरिक, मानसिक, आचारिक अथवा धार्मिक शिक्षा मिलने लगती है। तुतलाकर बोलना शुरू करते ही उसे शब्द ज्ञान मिलने लगता है। वह माँ-बापके पास रहकर खेलते ही खेलते अक्षर ज्ञान प्राप्त कर सकता है। पहले यही होता था, पाठशालामें बिठानेका रवाज तो अब इधर चला है। यदि माता-पिता बच्चोंके प्रति अपने कर्त्तव्यका यथार्थ पालन करें तो बच्चोंकी उन्नतिका कोई हद न रहे। पर हम तो बच्चोंको खिलौनोंकी तरह रखते हैं, उनका झूठा लाड़ प्यार कर, सुन्दर कपड़े लत्ते, गहने आदि पहना और मिठाई खिला-खिला बचपनहीसे उन्हें बिगाड़ देते हैं। झूठे स्नेहमें पड़कर हम उन्हें मनमानी करनेसे नहीं रोकते। हम स्वयं पैसेके लोभमें पड़े रहकर बच्चोंमें भी पैसेका लोभ उत्पन्न कर देते हैं। स्वयं विषयोंके कीड़े बने रहकर बच्चोंको भी विषय भोगके उदाहरण सिखलाते हैं। आलसी बने रहकर उन्हें भी आलसी कर डालते हैं। गन्दे रहकर उनको भी गन्दगी सिखाते हैं। झूठ बोलकर उन्हे भी झूठा बना देते हैं। फिर हमारी सन्तति निर्बल, दुराचारी, झूठी, विषयी, स्वार्थी और लालची हो तो इसमे नई बात क्या है? इन वाक्योंपर समझदार माता-पिता को खूब विचार करना चाहिये। हिन्दुस्तानका आधा भविष्य तो माँ बापके हाथमें है।

१०—आकस्मिक घटनाएँ

डूबना

अनेक रोगोंके विषयमें साधारणरूपसे विचार करनेके बाद समय-समयपर होनेवाली आकस्मिक घटनाओंपर भी विचार करना आवश्यक है। प्रत्येक मनुष्यको इनका साधारण ज्ञान होना चाहिये, जिसमें वह ऐसी घटनाओंके कारण प्राण जाते हुए मनुष्यकी मदद कर सके। लड़कोंको बचपन हीसे इन बातोंका ज्ञान करा देनेसे उनमें दयाभाव बढ़ना बहुत सम्भव है।

पहले हम डूबे हुए मनुष्यकी परिचर्याका विचार करते हैं। इङ्गलैंडमें ऐसी आकस्मिक घटनाओंमें मदद करनेके लिये एक परोपकारिणी संस्था है। उसने कितनी ही कामकी बातें प्रकाशित की है। उनमेंसे कई मुख्य बातें कुछ परिवर्तनके साथ घटा बढ़ाकर नीचे लिखी जाती हैं।

कहा जाता है कि सांस रुकनेके बाद मनुष्य दो मिनटसे अधिक शायद ही जी सकता हो; इसलिये पानीमें डूबे हुए मनुष्यमें बाहर निकलनेके बाद बहुत ही थोड़े अंशमें जीवन रह जाता है। उसे बनाये रखनेके लिये डूबे हुएको होशमें लानेके उपाय तुरंत करने चाहिये। इसके लिये दो बातें मुख्य हैं। एक तो कृत्रिम रीतिसे श्वासोच्छ्वास जारी करें, दूसरे उसके शरीरमें गरमी उत्पन्न करे। उपचारोंका विचार करते समय हमें यह बात याद रखनी चाहिये कि प्रायः हमें ऐसे रोगियोंका उपचार उन नदियों और तालाबोंके किनारे तुरन्त ही करना पड़ता है जहाँ सब साधन नहीं मिलते। डूबे हुए मनुष्यके पास दो-तीन आदमी हों तभी उसका उपचार ठीक तौरपर हो सकता है। ऐसे समय मदद करनेवाले मनुष्योंमें समय सूचकता, धीरज और फुरती होनी चाहिये। वे यदि उस समय खुद घबड़ा जायँगे तो उनसे कुछ न हो सकेगा। फिर इन दो-तीन मनुष्योंमें यदि प्रत्येक अपनी इच्छाके अनुसार उपचार करने लगेगा या एक दूसरेसे सलाह करने बैठेगा तब भी बीमारका बचाना कठिन हो जायगा। पासके मनुष्योंमें सबसे चतुर चुनकर उसकी आज्ञाके अनुसार औरोंको काममें लग जाना चाहिये।

बीमारको पानीसे निकालते ही उसके भींगे कपड़ोंको उतार डालना चाहिये और अपने पासके कपड़ोंसे उसका शरीर पोंछ डालना चाहिये। फिर अंधा लेटाकर उसके माथेके नीचे हाथ रखते हुए एक मिनटतक पड़े रहने देना चाहिये। तब उसकी छातीके नीचे हाथ रखकर मुँहसे पानी और थूक इत्यादि

निकाल डालना चाहिये। ऐसा करते समय जीभ बाहर निकल आयेगी, उसे रूमालसे पकड़ लेना चाहिये। जीभ बाहर निकलनेके बाद जबतक होश न हो तबतक उसे बाहर ही रखना चाहिये। इसके बाद रोगीको तुरन्त लेटा देना चाहिये, परन्तु माथा और छाती पैरोंकी अपेक्षा कुछ ऊँचाईमें रहे। अब एक आदमी घुटने टेककर बीमारके सिरके पीछे बैठ उसके हाथोंको धीरे-धीरे उठाकर लम्बा और सीधा करे। ऐसा करनेसे पसलियां ऊँची होगी और बाहरकी हवा उसके शरीरमे प्रवेश कर सकेगी। इसके-बाद ही उसके हाथोंको टेढ़ाकर उन्हें उसकी छातीपर दबाना चाहिए, ऐसा करनेसे उसकी पसलियां दबेंगी और उसके शरीरसे सांस बाहर आने लगेगा। इसके सिवा गरम और ठंढा पानी चुल्लूमे भर-भरकर बीमारकी छातीपर छिड़कते रहें। यदि आसपास साधन हो और आग सुलगाई जा सके तो सुलगा ले अथवा चटपट कहीं दूसरी जगहसे लाई जा सके तो लाकर बीमारको सेककर उसके शरीरको गरमी पहुँचावे। आसपास जितने लोग मौजूद हो वे अपने-अपने सब कपड़े बीमारको ओढ़ा दें और उसके शरीरको लगातार मले ताकि उसमें गरमी आ जाय। ये सब उपचार बहुत देरतक करते रहने चाहिये। एकदम आशा छोड़ देनेकी जरूरत नहीं। डाक्टर वेहिंगने लिखा है कि कभी-कभी इन सब उपचारोंको पांच छः घंटेतक किये जानेपर बीमारमें फिरसे सांस लौटा है। इसलिये ऊपरकी क्रिया बड़ी शीघ्रताके साथ उत्साहपूर्वक करते रहना चाहिये। बीमार कुछ होशमें आया जान पड़े तो उसी समय उसे कुछ गरम चीजें पिलानी चाहिये। नारंगी का रस गरम पानीमे डालकर देने या तज, लौंग और काली मिर्चका काढ़ा पिलानेसे बीमारमे फुर्ती आवेगी। बीमारको तम्बाकू सुंघानेसे भी लाभ पहुँचना सम्भव है। बीमारको उस समय घेरे रहकर निकम्मे खड़े रहनेकी आवश्यकता नहीं। कारण यह कि उसे खुली हवा जितनी अधिक

मिले उतना ही अच्छा।

ऐसे बीमारके मर जानेके साधारण चिह्न ये हैं—

सांस बन्द हो जाय, छातीपर हाथ या नली लगानेसे चाल न मालूम हो, नाड़ियां न चलें, आंखें अधखुली रह जायं, पलकें मोटी पड़ जायं, जबड़े जुड़ जायं, अंगुलियां टेढ़ी हो जायं, जीभ दांतोंके बीचमें आ जाय, मुहपर फेना दीखने लगे, नाकपर लालाई आ जाय, सारा शरीर फीका मालूम हो, मुँहके पास मोरपंख रखनेसे वह जरा भी न उड़े, नाकके पास शीशी रखनेसे उसमें जरा भी सांसकी भाप न जमे—ये सब चिह्न यदि एक साथ दिखलाई पड़ें तो समझ लेना चाहिये कि रोगी मर गया। परन्तु डाक्टर मूरका कहना है कि इन सब चिह्नोंके होते हुए भी कई बार देखा गया है कि उसमेंसे जीव नहीं निकला है। जीव निकल जानेकी ठीक परख यह है कि शरीरका सड़ना शुरू हो जाता है। इतना समझ जानेसे हम यह बात जान सकते हैं कि रोगीकी सेवा बहुत देरतक करनेके उपरान्त ही हमें उसकी आशा छोड़नी चाहिये।

११—आकस्मिक घटना

जलना

कभी किसीके कपड़े वगैरह जल उठनेपर हम घबड़ा जाते हैं और अपनी नासमझीके कामोंसे मदद करनेके बदले उसे अधिक विपत्तिमें डाल देते हैं। यह जलेपर नमक छिड़कना हो जाता है। इसलिये हम सबको जले हुएका इलाज जान रखना चाहिये।

कपड़े जल उठनेवालोंको भी घबड़ाना न चाहिए। कपड़ेका छोर जला हो तो उसे तुरन्त हाथसे मल देना चाहिये। सारा कपड़ा सुलग उठे तो तुरन्त धूलमें लेट जाय। दरी या कोई मोटा कपड़ा हो तो उसे तुरन्त समेट ले। पानी मिले तो कपड़े-पर डालकर आग बुझा ले। आग बुझते ही तुरन्त देखना

चाहिये कि कहींसे शरीर तो नहीं जला। जले हुए स्थानपर कपड़ा चिपक जाना सम्भव है। उसे वहांसे उघारे नहीं, चिपके हुए हिस्सेको छोड़कर बाकी कैंचीसे कतर डाले। पर बड़ी सावधानीसे कतरे, चमड़ा न निकलने पावे। फिर झटपट साफ मिट्टी ले और ठंडे पानीसे सानकर, जले हुए स्थानपर उसकी पुलटिस बाँध दे, इससे जलन तुरन्त मिट जायगी और बीमार बहुत कम तकलीफ पावेगा। यदि कपड़ा चिपका हो तो पुलटिस बाँधते समय उसके पड़े रहने देनेमें जरा भी हर्ज नहीं। पुलटिस सूख जानेपर फिर बदल देनी चाहिये। ठण्ठे पानीके उपयोगसे डरनेकी जरा भी जरूरत नहीं।

जिसे समयपर ये उपाय न सूझें उसके लिये नीचेकी दवाइयाँ हैं, इन्हें जान लेनेसे भी बहुत काम निकलता है। ये दवाइयाँ एक अंगरेज लेखककी पुस्तकसे ली गयी हैं। केलेके हरे पत्तेपर जैतूनका या और कोई मीठा तेल चुपड़कर जले हुए स्थानपर बाँध देना चाहिये। पत्तेके बदले साफ, बारीक कपड़ेको तेलमें भिगोकर बाँध देनेसे भी काम चल सकता है। अलसी (तीसी) का तेल और चूनेका पानी बराबर-बराबर खूब फेटकर लगाया जाय तो भी फायदा पहुँचता है। चिपके हुए कपड़ेको गुनगुने दूध और पानीसे खूब भिगोकर धीरेसे निकाल लेना चाहिये। पहली बार बाँधी हुई तेलकी पट्टीको दो दिनमें खोलें। फिर रोज नई पट्टी बदलें। फफोले पड़ गये हों तो फोड़ दे, पर चमड़ा न निकाले।

यदि जलनेसे केवल चमड़ा लाल हुआ हो तो उसपर मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेसे बढ़कर दूसरा कोई इलाज नहीं है। इसके बाँधते ही जलन बन्द हो जायगी।

उँगलियाँ जली हों तो साफ पट्टी बाँधकर ध्यान रखें कि एक दूसरीसे रगड़ न खायें। चमड़ेपर तेजाब गिरकर जलनेपर भी इन उपचारोंका प्रयोग करना चाहिये।

१२—आकस्मिक घटना

सर्पका डसना

मनुष्य सदैव साँपसे डरता आया है। सर्पके विषयमें प्रचलित भ्रमोंका कुछ ठिकाना नहीं है। हम साँपका नाम लेते डरते हैं। उसे रातको बड़ा जीव कहते हैं। हिन्दुओंमें साँप पूजे जाते हैं। नागपञ्चमी सर्प-पूजाका खास दिन ही है। अधिकांश हिन्दू शेषनागपर पृथ्वीका भार मानते हैं। भगवान्‌को शेषशायी अर्थात् शेषनागपर सोनेवाले कहते हैं। शिवजीके गलेमें साँपोंकी माला कही जाती है। इस कथनसे कि इनका वर्णन सहस्र मुख शेषनागसे भी नहीं हो सकता, साँपमें बुद्धि और ज्ञान भी माना गया है। ऐसे कुछ विचार ईसाई धर्ममें भी हैं। अंग्रेजीमें कहावत है कि हमारी बुद्धि साँपकी बुद्धिके समान तेज होनी चाहिये। करकोटक नागने नलको काटकर उसका बड़ा उपकार किया। जहर चढ़ाकर उसे कुरूप बना दिया जिससे जङ्गलोंमें भटकते हुए कोई उसे पहचाने नहीं। बाइबिलमें साँपको शैतानका रूप भी दिया गया है। साँपने हव्वा (आदम हव्वा) बीबीको ललचाया था।

साँपके विषयमें अनेक दन्त कथाएँ प्रचलित हैं। साँपसे डरनेका कारण स्पष्ट है। यदि साँपका जहर शरीरमें पूरी तरह घुस जाय तो आदमी मर जाता है। हमें मौत पसन्द नहीं इसीसे साँपसे डरा करते हैं। भय ही साँपकी पूजाका कारण भी जान पड़ता है। अगर वह बिलकुल ही छोटा जन्तु होता तो इतना भयङ्कर होनेपर भी कदाचित् पूजा न जाता; परन्तु वह बड़ा सुन्दर और विचित्र प्रकारका प्राणी है इसीसे इसकी पूजा भी होती है।

साँपमें बुद्धि क्यों मानी गयी, इसका विचार करना चाहिये। आजकलके पाश्चात्य विद्वान् साँपमें बिलकुल बुद्धि नहीं मानते।

वह साँपको देखते ही मार डालनेके पक्षमें हैं। सरकारी गणनासे हिन्दुस्तानमें साँपके काटनेसे प्रतिवर्ष २०००० हजार मनुष्य मरते हैं, सम्भव है और अधिक मरते हों। सरकार जहरीले साँप मारनेपर इनाम देती है। अब देखना यह है कि इससे हिन्दुस्तानको कुछ फायदा हुआ है कि नहीं। यह तो साधारण अनुभव है कि साँप यकायक नहीं काटता, बल्कि छेड़नेपर ही काटता है। क्या इससे साँपमें बुद्धि नहीं सूचित होती? सम्भव है कि यह भी बुद्धिका चिह्न न माना जाय, पर इससे उसकी निर्दोषिता तो सिद्ध होती ही है। अपने बचावके लिये वह अपने दाँतोंको काममें लाता है, मनुष्य भी प्रायः यही करते हैं। हिन्दुस्तान या किसी देशको सर्पहीन करनेका प्रयास हवासे लड़नेके समान है। किसी विशेष भागमें साँपोंका आना रोका जा सकता है, वहाँ आनेपर मार डालनेसे दूसरे साँप वहाँ आते हुए रुकेंगे। वे वहाँ जाना मौतके पंजेमें जानेके समान समझेंगे। पर यह बहुत ही थोड़े हिस्सेमें किया जा सकता है। हिन्दुस्तान जैसे बड़े मुल्कमें यह प्रयास कभी सफल नहीं हो सकता, यहाँ साँपोंको मारकर जड़मूलसे नष्ट कर देनेका प्रयास पैसा पानीमें फेंकनेके समान है।

साँपोंको पैदा करनेवाला भी वही ईश्वर है। हममें ईश्वरके सब कामोंके समझनेकी शक्ति नहीं है। उसने बाघ, सिंह, साँप, बिच्छू इत्यादिको हमारे मारनेके लिये नहीं उत्पन्न किया है।

यूरोपमें सेण्ट फ्रांसिस नामका एक महायोगी हो गया है। वह जङ्गलोंमें साँप इत्यादिके बीचमें फिरा करता था, पर वे उसे कभी तकलीफ न देते; बल्कि मित्रता रखते थे। हिन्दुस्तानके जङ्गलोंमें हजारों योगी और फकीर रहते हैं। वे भी बाघ, तेंदुए, सिंह, साँप इत्यादिमें निर्भय विचरते हैं, उन्हें उनसे कभी कष्ट पहुँचते नहीं देखा सुना जाता। कह सकते हैं कि साँप तथा हिंसक जीवोंसे इनका क्षय होता हो तो हमें क्या मालूम है। यह

सम्भव है पर हम तो जानते हैं कि साँप इत्यादि इतने अधिक हैं—और उनके परिमाणमें योगी फकीर इतने कम हैं—कि यदि ये नाशक जन्तु उनके पीछे पड़ जायँ तो उनमेंसे एक भी जीता न बचे और यह भी हमें मालूम है कि योगी फकीरोंके पास इन जन्तुओंसे सामना करनेका भी कोई साधन नहीं रहता। इससे सिद्ध होता है कि कितने ही भयङ्कर समझे जानेवाले प्राणी कितने ही योगी फकीरोंके साथ मित्रता रखते हैं, उन्हें सताते नहीं—निर्भय विचरने देते हैं। मैं इस बातका माननेवाला हूँ कि हम किसी जीवके साथ बैर भाव न रखें तो वह भी हमारे साथ वैर भाव न रखेगा। दया और प्रेम मनुष्यके महान् गुण हैं। इसके बिना कोई ईश्वर-भक्ति नहीं कर सकता। सारे मतोंमें दया धर्मकी जड़ मानी गई है।

इसके सिवा साँप इत्यादिकी उत्पत्ति अथवा उनका क्रूर स्वभाव हमारे स्वभावकी छायाका परिणाम क्यों न समझा जाय। मनुष्यमें थोड़ी क्रूरता है? हमारी जीभमें सर्प दंशनका गुण सदा भरा रहता है। हम तेंदुए और सिंहके समान अपने भाइयोंको ही फाड़ खाते हैं। धर्म—पुस्तकमें लिखा है कि निर्दोषी मनुष्यसे सिंह और बकरी भी मित्रता करने लगते हैं। जब हमारे अन्दर ही सिंह और बकरीकी लड़ाई जारी है तब इस संसाररूपी शरीरमें वैसी लड़ाई चलती है तो इसमें आश्चर्य क्या है? हम संसारके दर्पण स्वरूप हैं। उसके सब भाव हमारे शरीर रूपी जगतमें मौजूद हैं। यदि हम इन्हे बदल डालें तो निस्सन्देह जगतके भी भाव बदल जायंगे। अपने भाव बदल देनेवालोंके लिये जगत बदल जाता है, यह ईश्वरकी महिमा है, यह खूबी है और इसीमें हमारे सुखोंका मूल छिपा हुआ है। यह मार्ग स्वीकार करनेसे हमें दूसरोंके कार्योंका विचार न करना पड़ेगा। अपनेही कार्योंसे हम सब कुछ कर सकते हैं।

साँपके काटनेके विषयमें बढ़ाकर लिखनेका प्रयोजन यह है

कि साँप काटनेके स्थूल उपाय बतानेकी अपेक्षा जरा गहराईमें उतरकर ऐसे चमत्कारपूर्ण उपाय बताये जायँ जो ऐसे सब भयोंपर काम दे सकते हों। इसलिये ऊपर लिखे ढङ्गके इलाज ग्रहण करनेका यदि एक भी पाठक प्रयत्न करेगा तो ये सब बातें निरर्थक नहीं गिनी जायँगी। इसके सिवा पहले ही कहा जा चुका है कि इन प्रकरणोंके लिखनेका एकमात्र उद्देश्य शारीरिक आरोग्य रक्षाके नियमोंका बताना ही नहीं है बल्कि सब प्रकारके आरोग्य रक्षाके साधनोंपर विचार है।

आजकलके खोज करनेवाले भी कहते कि जिस मनुष्यका शरीर नीरोग है, जिसके खूनमें खराबी नहीं पहुँचती और जिसका भोजन सात्विक है, उस मनुष्यको साँपका जहर यकायक नहीं चढ़ता, इसके विरुद्ध शराब पीने अथवा खूब मसालेदार या गरमी उत्पन्न करनेवाले भोजन करनेसे जिसका खून उबल रहा है उसके शरीरमें साँपका विष तुरन्त फैलता है और तत्काल मृत्यु हो जाती है। यह बात सब वैद्य शास्त्रियोंने अनुभव द्वारा जाननेके बाद ही प्रकाशित की है। एक लेखक यहाँतक कहता है कि जो नमक इत्यादि छोड़ देता है और केवल फलाहार करता है उसका खून इतना स्वच्छ होता है कि वह हर प्रकारके जहरका सामना कर सकता है। यह अन्तिम सिद्धान्त कहाँतक ठीक है यह अनुभव द्वारा नहीं कहा जा सकता। जिन लोगोंने दो एक बरससे नमक इत्यादि छोड़ रखा है उनके खूनमें ऊपर लिखा हुआ गुण नहीं हो सकता है। कारण यह कि जो खून बहुत दिनोंके दुरुपयोगसे अपने स्वाभाविक गुणोंसे रहित हो गया है वह दो एक बरसके स्वच्छ व्यवहारसे असली दशामें पहुँचा हुआ नहीं समझा जा सकता।

प्रयोग करके लोगोंने यहाँतक पता लगाया है कि भयभीत और क्रोधयुक्त मनुष्यमें जहरका असर बहुत अधिक और बहुत जल्द होता है। यह तो [illegible] आदमी खुद अनुभव कर सकता

है कि क्रोध और भयके समय नाड़ी बहुत जल्द चलती है और दिलमें धड़कन बहुत होती है। खून जब तेजीके साथ बहता है तब वह बहुत ही गरम होता है और चूँकि क्रोध इत्यादिसे उत्पन्न होनेवाली गरमी प्राकृतिक नहीं है इसलिये वह हानिकारक होती है। इसमें जरा भी शक नहीं कि क्रोध एक प्रकारका ज्वर है। इस विवेचनसे हम इतना समझ सकते हैं कि साँप इत्यादिमें जहरका अच्छेसे अच्छा उपाय यह है कि हम सात्विक भोजन उचित परिमाणमें करें, क्रोधादिसे बचे, भयभीत न हों साँप काटनेपर 'हाय मरे रे' चिल्लाकर उचित इलाज होनेसे पहले ही न मर रहें। अपने पवित्र जीवनकी श्रेष्ठतापर भरोसा रखें और अन्तमें यह समझकर धैर्य धारण करें कि ईश्वरने जितनी जिन्दगी दी है उतनी ही रहेगी—अधिक नहीं।

पोर्ट एलिजाबेथके संग्रहालयके उच्चाधिकारी मि० फिट्ज़ सीमने भलीभाँति सिद्ध कर दिया है कि साँप काटनेसे होनेवाली बहुतेरी मौतें भय अथवा अयोग्य इलाजसे होती हैं। उन्होंने बहुत वर्षोंतक सर्प-सम्बन्धी बातोंका अभ्यास किया है। सर्पोंके जहरके विषयमें बहुतसे प्रयोग किये हैं। भिन्न भिन्न प्रकारके साँपोंकी जानकारी प्राप्त करके इलाज भी बताये हैं। उनका कहना है कि भयमें पड़ जानेके कारण बहुत आदमियोंको हमने जोखिममें पड़ते हुए देखा है तथा बहुतेरे आदमी अनाड़ी इलाजों-से मौतके शिकार बने हैं।

सब साँप जहरीले नहीं होते और न जहरीले साँपोंमेंसे सब-के जहरसे तत्काल मौत ही होती है। एक बात और भी है कि बहुत जहरीले साँपोंको भी अपनी जहरकी सारी थैली सदा मनुष्यके खूनमें उड़ेल देनेका मौका नहीं मिलता। इन सब बातों-को समझकर किसी भी मनुष्यको साँप काटनेपर घबड़ा जानेकी जरूरत नहीं है। आजकल ऐसे इलाज काममें लाये जाने लगे हैं जिन्हें सर्पदंशित मनुष्य खुद कर सकता है। वे इलाज ये हैं—

जहाँ साँपने काटा हो उस स्थानसे ऊपरकी ओर खूब कस-कर रूमाल बाँध देना चाहिये। खूब मजबूत पेंसिल या लकड़ीके टुकड़ेसे चारों ओर बल दे देना चाहिये। बाँधनेकी जरूरत इस-लिये होती है जिससे रगों द्वारा जहर आगे न जा सके। इतना कर चुकनेके बाद चाकूके बारीक नोकसे काटनेके स्थानपर आधा इञ्च गहरा छेदकर उस जगहका खून निकाल देना चाहिये। इसके बाद परमैगनेट आफ पोटाश, नामक क्षारकी बाजारमें मिल सकनेवाली लाल काली बुकनी भर देनी चाहिये। यह बुकनी साँप काटनेकी अचूक दवा समझी जाती है। ऐसी नालियाँ बारह आनेमें मिलती हैं जिनमें एक बलखाया हुआ अनीदार छोटासा चाकू होता है और दूसरी तरफ बुकनी रखी रहती है। यदि दवा न मिले तो रोगीके घावको कोई आदमी या रोगी खुद चूसता और खूनको थूकता रहे। जिसके मुँहमें घाव हो उसे चूसनेका काम नहीं करना चाहिये। कारण चूसा हुआ पदार्थ निरा जहर ही है। इस इलाजसे तभी फायदा पहुँच सकता है जब काटनेसे सात मिनटके अन्दर ही इसका प्रयोग किया जाय—यदि जहर खूनमें होकर तमाम शरीरमें फैल गया तो उसका निकलना बहुत कठिन है। मिट्टीके प्रयोग करनेवाले जुस्टने लिखा है कि मैंने साँपके काटनेपर मरे मालूम होनेवाले मनुष्यको मिट्टीके प्रयोगसे अच्छा किया है। वह इस प्रकार—जमीनमें गड्ढा खोदकर बीमारको उसीमें लिटा दिया और उसका सारा शरीर खोदी हुई मिट्टीसे ढकवा दिया। इससे मिट्टीने शरीरमें गरमी उत्पन्न कर जहरको चूस लिया और बीमार उठ बैठा। जुस्टने इस प्रकारके और उदाहरण दिये हैं। साँप काटनेके विषयमें यद्यपि मेरा निजी अनुभव नहीं है, फिर भी मिट्टीके बहुतसे अन्यान्य प्रयोग करनेके कारण उसपर मेरी अचल श्रद्धा है। जिस जगह साँपने काटा हो वहाँपर लाल बुकनी भरने या चूसनेके बाद तुरन्त मिट्टीकी आध इञ्च मोटी

इतनी लम्बी चौड़ी पुलटिस बाँध देनी चाहिये जिससे कि जिस हाथमें साँपने काटा हो वह सारा हाथ ढँक जाय। हर मनुष्यको चाहिये कि वह टीनमें भरकर अपने घरमें मिट्टी सदा तैयार रखे। यह मिट्टी पीसकर छानी हुई होनी चाहिये। इसे ऐसी ऊँची जगहमें रखना चाहिये कि जहाँ इसपर पानी न पड़े किन्तु धूप और हवा पहुँचती रहे। फटे हुए कपड़ोंसे पट्टियाँ भी तैयार कर रखनी चाहिये। यह तैयारी केवल साँप काटनेकी दशामें ही उपयोगी नहीं है बल्कि बहुतेरी आकस्मिक घटनाओंमें भी काम देनेवाली है।

यदि बीमार बेहोश होने लगे या साँस रुकता मालूम हो तो पानीमें डूबे हुए मनुष्यके लिये श्वासोच्छ्वासके जो कृत्रिम उपाय बताये गये हैं उनकी योजना करनी चाहिये। बेहोशी रोकनेके लिये गरम-गरम पानी या लौंग और तजका काढ़ा देना लाभदायक है। बीमारको खुली हवामें रखना चाहिए, मगर उसके शरीरके चारों ओर गरम पानीकी बोतलोंका उपयोग करना चाहिये या फलालेनको गरम पानीमें निचोड़कर उसे शरीरपर मलकर गरमी पहुँचानी चाहिये।

१३—आकस्मिक घटना

बिच्छू वगैरहका डङ्क

हम लोगोंमें कहावत है कि बिच्छूके डङ्कसी पीड़ा भगवान किसीको न दे। इससे प्रकट होता है कि बिच्छूके डङ्कसे बड़ी सख्त पीड़ा होती है सर्पदंशकी अपेक्षा भी बिच्छूके डङ्ककी वेदना मनुष्यको अधिक दुःख देती है। फिर भी सर्पसे हम बहुत ज्यादा डरते हैं। क्योंकि साँपके काटनेसे मरनेका भय रहता है, परन्तु बिच्छूके डङ्कसे प्रायः मौत नहीं होती। डाक्टर मूर लिखता है कि जिसका खून साफ होता है उसे बिच्छूका डङ्क बहुत कम तकलीफ देता है।

बिच्छू तथा इस प्रकारके अन्यान्य डंकोंका उपाय बहुत ही सहज है। जहाँ डंक लगा हो वहाँ नोकदार चाकूसे या साँप काटनेकी दवाके साथ जो खास औजार मिलता है उसके द्वारा छेद करके खून निकाल देना चाहिये और पीछेसे उस स्थानको जरा चूस डालना चाहिये। वेदना आगे न फैलने देनेके लिये डंकके ऊपरकी ओर एक छोटी सी पट्टी बाँधकर ऊपरसे मिट्टीकी मोटी पुलटिस बाँधनी चाहिये। मिट्टीकी पुलटिससे असह्य वेदना भी एकदम बन्द हो जा सकती है।

कितनी ही पुस्तकोंमें लिखा है कि सिरका और पानी बराबर मिलाकर उसमें कपड़ेकी गद्दी भिगो-भिगोकर रखते रहना चाहिये या नमकके पानीसे डंकके पासका भाग धोते रहना चाहिये। यदि दंशित भाग नमकमें डुबो रखनेके लायक हो तो उसे डुबो रखना और भी उत्तम है। परन्तु इन सब उपायोंमें मिट्टीकी पुलटिस सबसे अधिक बलवान है। इस बातका अनुभव वे लोग खुद कर सकते हैं जिन्हे अभाग्यसे बिच्छूने काटा हो। यह खूब याद रखना चाहिये कि पुलटिस जहाँतक हो सके मोटी बनाई जाय, दो सेर मिट्टी भी काममें जाई जाय तो अधिक नहीं है। मान लीजिये कि उँगलीमें बिच्छूने काट खाया, ऐसी दशामें कोहनीतक मिट्टीकी पुलटिस बाँधनेके लिये इतनी मिट्टी अधिक नहीं हो सकती। एक बड़े लम्बे बरतनमे भीगी मिट्टी मलकर यदि उसमें हाथ डाल रखा जाय तो वेदना तुरन्त कम हो जायगी।

कनखजूरा, बर्रे, और भँवरी आदिके काटनेपर भी ऊपर लिखा हुआ इलाज करना चाहिये।

पूर्णाहुति

आरोग्यके सम्बन्धमें मैंने जितनी बातें लिखनी चाही थीं वे पहले प्रकरणमें समाप्त हो गईं यदि हो सका तो कितनी ही सादी वस्तुओंके गुण और उपयोगके विषयमें परिशिष्टकी भाँति

कभी कुछ और लिखनेका प्रयत्न करूँगा। अस्तु अब यह आवश्यक जान पड़ता है कि पाठकोंसे छुट्टी लेनेके पहले पिछले प्रकरणोंके उद्देश्यपर फिरसे एक नजर डाल ली जाय।

मैंने अपने मनमें यह सवाल बारम्बार किया है कि ये प्रकरण मैंने किसलिये लिखे? क्योंकि मैं वैद्य नहीं हूँ और न इन विषयोंका मुझे यथेष्ट ज्ञान ही है। इस दशामें क्या यह सम्भव नहीं कि मेरी सूचनाएँ अधूरे अवलोकन और अधूरे ज्ञानसे भरी हों? दरअसल अवलोकन और ज्ञान दोनों ही अधूरे हैं और इनकी पूर्णता हो भी नहीं सकती, क्योंकि नित्य नई बातें देखने और विचारनेमें आती हैं। तब फिर यह प्रयास क्यों किया गया?

उत्तरमें कहा जा सकता है कि वैद्यकी रचना ही अपूर्ण प्रयोगोंके आधारपर है। उसमें अधिकांश अटकल पच्चू बातें हैं। उन्हींके समान हमारे प्रकरणोंको समझ लेनेमें भी कोई हर्ज नहीं मालूम होता। ये निर्दोष हेतुसे लिखे गये हैं। इनका उद्देश्य व्याधि हो जानेपर उसके रोकनेका उतना नहीं है जितना उसे पहलेही से होने न देनेका। विचार से मालूम होगा कि व्याधि रोकनेका रास्ता सहज है। उसके लिये विशेष ज्ञानकी जरूरत नहीं। हां, उस रास्तेपर चलना कठिन है। हमने कुछ व्याधियोंके विषयमें लिखना इसलिये उचित समझा है कि लोग समझ जायँ कि सब व्याधियोंका मूल कारण बहुत करके एक है, और इसलिये उनका उपाय भी एक ही होना चाहिये। कभी-कभी देखा जाता है कि बहुत सावधान रहनेपर भी इन प्रकरणोंमें वर्णित व्याधियाँ उत्पन्न हो जाया करती हैं उनके उपाय तो करीब-करीब सब जानते ही हैं, फिर भी यदि इनमें मेरा अनुभव शामिल कर लिया जाय तो कुछ हानि होनेकी सम्भावना नहीं।

अभी मुख्य प्रश्नपर विचार करना बाकी है। आरोग्यकी आवश्यकता क्या है? हमारे व्यवहार देखनेसे तो यही जान पड़ता

है कि हम आरोग्यकी कोई आवश्यकता ही नहीं समझते। यह निर्विवाद है कि ऐश-आराम करना, शरीरहीको सारी चीजोंसे श्रेष्ठ समझना, उसकी दृढ़तापर गर्व करना, आदि बातें यदि आरोग्य रक्षाका उद्देश्य समझी जायँ तो ऐसे आरोग्यसे तो शरीर में दूषित पित्तादिका भरा रहना ही उत्तम है।

सारे धर्मोंने इस शरीरको ईश्वरसे मिलने और उसके पहिचाननेका मन्दिर ठहराया है। यह मन्दिर हमें किरायेपर मिला है। मालिककी स्तुति और पूजाके रूपमें किराया चुकता है। किरायेदारका दूसरा कर्तव्य यह होना चाहिये कि वह घरका दुरुपयोग न करे और उसे भीतर और बाहरसे साफ रखते हुए नियत समयमें मालिकको ऐसी स्थितिमें सौंप दे जैसा उससे मिला था। किरायेदार यदि भाड़ेकी सभी शर्तोंका पालन करता है तो गृहस्वामी किरायेकी अवधि पूरी होनेपर उसे इनाम देता तथा अपना वारिस बनाता है।

जीवमात्र देहधारी हैं और सबके शरीरकी आकृति प्रायः एक हीसी है—सुनने, देखने, सूँघने और भोग भोगनेके लिये सभी साधन सम्पन्न हैं, इन सब बातोंमें समता होनेपर भी मनुष्य शरीरको चिन्तामणि कहा गया है। चिन्तामणिका अर्थ यह है कि उसके द्वारा हम जो चीज चाहें पा सकते हैं। पशु शरीर द्वारा जीव ज्ञानपूर्वक ईश्वरकी भक्ति नहीं कर सकता और इसमें सन्देह नहीं कि जहाँ ज्ञानपूर्वक भक्ति नहीं वहाँ मुक्ति नहीं, और जहाँ मुक्ति नहीं वहाँ न तो सच्चा सुख मिल सकता है और न दुःखोंका नाश ही हो सकता है। जब शरीरका सदुपयोग हो अर्थात् उसे ईश्वरका घर समझा जाय तभी वह कामका है, अन्यथा वह हाड़, माँस और खूनसे भरा एक गन्दा बरतन है और उसमेंसे निकलकर बाहर आनेवाला पानी और साँस दोनों जहरीली चीजें हैं। शरीरके असंख्य छोटे-बड़े छेदोंमेंसे निकलनेवाली चीजें इस योग्य नहीं कि हम उनको इकट्ठी कर रखना

चाहें। उन्हें विचारने, देखने और छू जानेपर हम कै कर देते हैं। बड़ा परिश्रम करनेपर हम कहीं इस योग्य हो सकते हैं कि उन बाहर निकली हुई चीजोंमें कीड़े न पड़ने दें—उनको बचा लें। ऐसी दशामें कितनी लज्जाकी बात है कि हम ऐसे शरीरके लिये बेईमानी, दगाबाजी, स्वेच्छाचारिता, कपट, चोरी व्यभिचार इत्यादि लाखों न करने योग्य काम करें। क्या हम इन्हीं कामोंके लिये ऐसे शरीरको नित्य बड़े यत्नसे सँभाला करते हैं जो सब प्रकारकी सँभाल होते हुए भी ठोकरेकी अपेक्षा भी आघात सहनेकी कम शक्ति रखता है?

यह शरीरकी वास्तविक दशा है। जिस चीजका अच्छेसे अच्छा उपयोग हो सकता है उस वस्तुका दुरुपयोग होनेकी सत्ता उसी मे होती है। न हो तो उसका मूल्य निर्धारित नहीं किया जा सकता। सूर्यके तेजकी परीक्षा हम इसलिये कर सकते हैं कि उसके अभावमें अन्धेरेकी स्थितिका हमें प्रत्यक्ष अनुभव हो जाता है। यही क्यों, जिस सूर्यके बिना हम घड़ीभर भी नहीं जी सकते उसी सूर्यमें हमको जलाकर राख कर डालनेकी भी शक्ति मौजूद है। राजाके सम्बन्धमें लीजिये—वह बहुत अच्छा हो सकता है और बहुत अधम भी बन सकता है।

शरीरको अपने वशमें रखनेके लिये एक ओर तो अन्तरात्माका प्रयत्न जारी रहता है, दूसरी ओर पापपुरुष शैतान अपने अनवरत उद्योगसे उसे अपनी मुट्ठीमें कर रखना चाहता है। जब शरीर अन्तरात्माके अधीन रहता है तब वह रत्नके समान है। और शैतानका अधिकार जम जानेपर साक्षात् नरककी खानि हो जाता है। जो शरीर विषयासक्त है, जिसमें तमाम दिन सब प्रकारकी सड़ने या सड़ानेवाली खुराक भरी जाती है, जिसमेंसे दुर्गन्धि निकला करती है, जिसके हाथ पैर चोरी के काममें और जिसकी जीभ अभक्ष्य भक्षण और अयोग्य भाषणमें ही निरत रहती है। जिसकी आँखें न देखने योग्य चीजोंके देखने, जिसके कान न

सुनने योग्य बातोंके सुनने, जिसकी नाक न सूंघने योग्य चीजोंके सूंघनेमे व्यवहृत होती है वह तो नरकसे भी गया गुजरा है। नरकको तो सब नरक रूपमें ही देखते हैं, किन्तु विचित्रता यह है कि शरीरको नरकके समान बनाते हुए भी हम उसे स्वर्गरूपमें गिनते चले जाते है। शरीर के सम्बन्धमें यह नारकीय दंभ और राक्षसी ढोंग चल रहा है। पाखानेको पाखाना समझकर ही उपयोगमें लाना चाहिये और महलका उपयोग महलकी भाँति ही किया जाना चाहिये। जो लोग इनका विरुद्ध उपयोग करते हैं वे वैसा ही फल भी भोगते हैं। ठीक यही बात शरीरपर घटती है। शैतानके कब्जेमें रहनेवाले, अपनी अन्तरात्माके वशमें न रहनेवाले शरीरसे, आरोग्य चाहनेके बदले उसका नाश चाहना अधिक सुखकर है।

आरोग्य प्रकरणों द्वारा हमने यह बतलानेका प्रयत्न किया है कि ईश्वरीय नियम पालनेहीसे शरीर नीरोग रह सकता है—शैतानी नियम पालनेसे नहीं। जहाँ सच्चा आरोग्य है वहीं सच्चा सुख है और सच्चा आरोग्य प्राप्त करनेके लिये हमें स्वादेन्द्रिय जीभको जीतना ही जरूरी है। अन्यान्य विषयेन्द्रियां अपने आप वश हो जाती हैं, और जो इन्द्रियोंको वश कर लेता है वह सारे संसारको वश कर लेता है. कारण यह कि वह मनुष्य ईश्वरका अधिकारी, उसका अंश बन जाता है। रामायण पढ़नेसे राम; गीता पढ़नेसे कृष्ण, कुरान पढ़नेसे खुदा और बाइबिल पढ़नेसे ईसामसीह नहीं मिल सकते। मिल सकते हैं चरित्रसे। चरित्र नीति आचरणमें और नीति सत्यमें है। सत्य ही शिव है अथवा जो कहिये वह ? है और हमारे ये प्रकरणोंके लिखनेका भी यही मुख्य उद्देश्य है कि वह सत्य—अधिक न हो तो—थोड़ा बहुत इन प्रकरणोंमें दिखलाई पड़े।

समाप्त

स्वास्थ्य साधन

लेखक—

रामदास गौड़

स्वास्थ्यके सम्बन्धमें यह ग्रन्थ अपने ढङ्गका बिलकुल निराला है। इस ग्रन्थमे रोगकी मीमांसा, रोगीके लक्षण, मिथ्योपचारविमर्श और प्राकृतोपचार-दिग्दर्शन इत्यादि विषयोंकी व्याख्या बड़ी ही विद्वत्तासे की गयी है।

यह ग्रन्थ प्रत्येक गृहस्थको अपने घरमें रखना चाहिये। प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें राष्ट्रीय भाषा हिंदीमें यह ग्रन्थ बिलकुल नया और बहुत ही विचारपूर्ण लिखा गया है। पौने पाँच सौ पृष्ठकी ऐसी विद्वत्तापूर्ण तथा कई चित्रोंसे विभूषित पुस्तकका मूल्य केवल ३॥) सजिल्द ४)

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

२०३ हरिसनरोड,

कलकत्ता।